मूल्य: ₹30

मई-जून 2020

आई. एस. ओ. 9001: 2015 संगठन

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय पत्रिका

फल फूल

भाकृअनुप
ICAR

www.icar.org.in

भारत के एकमात्र दोहरे नारियल वाले पेड़ को बचाने की चुनौती

दुर्लभ प्रजाति के 125 वर्ष पुराने देश के इकलौते 'दोहरे नारियल' पेड़ को बचाने के लिए वनस्पति वैज्ञानिक लंबे समय से प्रयास कर रहे हैं। वनस्पतिशास्त्र में लोगों के लिए कौतुहल का कारण यह नारियल पेड़ पश्चिम बंगाल की राजधानी कोलकाता के नजदीक हावड़ा के 232 वर्ष पुराने आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान में स्थित है। यहां पर यह वृक्ष ब्रिटिश इंडिया के समय 1894 में अंग्रेजों द्वारा लगाया गया था। वैज्ञानिकों को डर सता रहा है कि दोहरे नारियल प्रजाति का यह मादा पेड़ अब मरने की कगार पर खड़ा है। इसलिए इसकी देखभाल पर बहुत ध्यान दिया जा रहा है।

हाल के दशकों में वैज्ञानिकों द्वारा इस नारियल पेड़ में फलन के लिए कई गंभीर प्रयास किए गए हैं। इससें फलन तो शुरू हुआ, लेकिन अभी तक इससे कोई भी परिपक्व फल प्राप्त नहीं किया जा सका।

आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान के क्यूरेटर श्री एस.एस. हामिद के अनुसार, यदि इस पेड़ के मरने से पहले इसका फल परिपक्व हो जाता है तो इसकी जगह दूसरा पेड़ तैयार कर सकते हैं। उस स्थिति में देश को एक और दोहरे नारियल वाला पेड़ मिलेगा। अगर फल के परिपक्व होने से पहले ही इस पेड़ की मृत्यु हो जाती है, तो इसको बचाने के लिए वैज्ञानिकों ने वर्षों से जो प्रयास किए हैं, वे विफल हो जाएंगे और भारत में ऐसा कोई पेड़ नहीं बचेगा।

ऐसे नारियल के पेड़ केवल सेशेल्स के दो द्वीपों पर ही पाए जाते हैं। ये भारत,

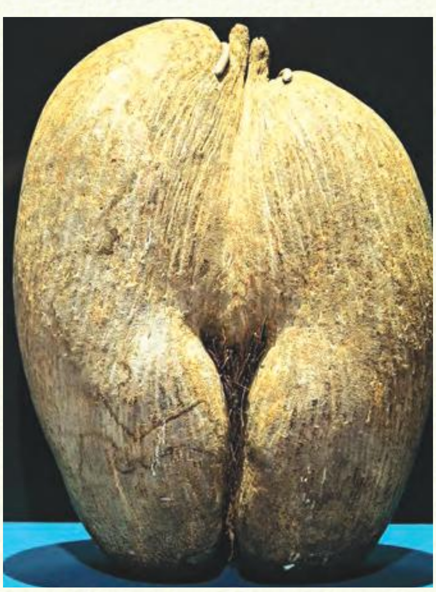

दोहरे नारियल का फल

श्रीलंका और थाईलैंड जैसे देशों में अंग्रेजों द्वारा लगाए गए थे। ये पेड़ 1200 साल तक जीवित रह सकते हैं और वनस्पति जगत में सबसे बड़े फल (25 किलो तक वजन) और पत्तियों को सहन कर सकते हैं।

वैज्ञानिकों के अनुसार भारत का यह दोहरे नारियल वाला पेड़ अलग इलाके और जलवायु में बढ़ रहा है। इसलिए ऐसी स्थिति में यह पूरी तरह से अपना जीवन नहीं जी सकता है। पिछले एक वर्ष से इस पेड़ में कोई नया पत्ता नहीं निकला है और इसकी मौजूदा पत्तियां भी धीरे-धीरे पीली हो रही हैं। यह चिंता का विषय है।

नारियल वृक्ष

लुप्त होने की कगार पर दोहरे नारियल पेड़

दोहरा नारियल (लोडोइसिया माल्डिविका या एल सेचिल्लैरिकम) एक बहुत ही रोचक पाम है। इन 30 मीटर ऊंचे पेड़ों की पंखेनुमा पत्तियां होती हैं और ये 1200 वर्ष तक जीवित रहते हैं। अपने प्राकृतिक रूप में ये पेड़ सेयचिल्लीज (भारतीय महासागर में ग्रेनाइट की पहाड़ियों पर स्थित द्वीप समूह) में पाये जाते हैं। ये पेड़ लगभग लुप्त प्रजातियों की श्रेणी में हैं। इसलिये कानून द्वारा इनको संरक्षण मिला है। नर और मादा पेड़ अलग-अलग होते हैं। मादा पेड़ों के फल हरे रंग के, बड़े हृदय जैसे आकार के होते हैं। उनका भार 15-20 किलो होता है और उन्हें पकने में 5-8 साल लग जाते हैं। त्वचा के नीचे रेशों की एक परत होती है, जो भूरी हड्डियों जैसी दिखती है। इस कवच के अंदर दो खंडों वाला बीज होता है, जो वनस्पति जगत का सबसे बड़ा (50 सें. मी.) और सबसे भारी बीज है। बेजान बीज अक्सर तैरते हुये भारत के समुद्री तटों पर आ जाते हैं। लोग इन्हें उत्सुकता से इकट्ठा करते हैं। इन्हीं कवचों को भारत में साधु अपने कमंडल के लिये उपयोग करते हैं। भारत के जाने-माने वनस्पतिशास्त्री प्रोफेसर एच.वाई. मोहन राम ने दोहरे नारियल के बारे में कई वैज्ञानिक लेख लिखे हैं। उनके अनुसार फ्रेंच जलसेना के कप्तान लजारे पिकौल्ट ने पहली बार दोहरे नारियल के पेड़ को खोजा था।

आचार्य जगदीश चंद्र बोस भारतीय वनस्पति उद्यान के पूर्व निदेशक एच.एस. देबनाथ के अनुसार, 'जब यह पेड़ 94 वर्ष का था, तब इसमें पहली बार फूल आया। जब हमें पता चला कि यह एक मादा वृक्ष है, तो हमने परागण के लिए एक नर वृक्ष की खोज शुरू की। ऐसे में सबसे निकटतम नर वृक्ष श्रीलंका के रॉयल वनस्पति उद्यान में पता चला। वर्ष 2006 में नर फूल के पराग को इस वृक्ष को कृत्रिम रूप से परागित करने के लिए लाया गया था, लेकिन प्रयास विफल रहा।'

उन्होंने बताया कि वर्ष 2013 में थाईलैंड के एक अन्य नर वृक्ष से परागण कराया गया। इस बार यह प्रयास सफल रहा और पेड़ ने फल देना शुरू किया। इसे परिपक्व होने में कम से कम अभी एक और साल लगेगा, जिसके बाद वैज्ञानिक इसका बीज निकाल पाएंगे।

उद्यान के वैज्ञानिक यह सुनिश्चित कर रहे हैं कि दोहरे नारियल का यह पेड़ किसी रोग से ग्रसित न हो। रोगों से बचाने के लिए नीम आधारित फफूंदनाशक का प्रयोग किया जा रहा है। पेड़ को उसके भारी फलों के बोझ से बचाने के लिए रस्सियों का उपयोग कर सहारा दिया जा रहा है।

भारतीय वनस्पति सर्वेक्षण विभाग के वैज्ञानिकों के अनुसार दुर्भाग्य से दो-तीन साल पहले इस दोहरे नारियल पेड़ के शीर्ष को एक फफूंद का सामना करना पड़ा। इससे उसके स्वास्थ्य पर बुरा असर पड़ा। इसका विकास लगभग बंद हो गया है। ऐसे में यह भरसक प्रयास किया जा रहा है कि फल के परिपक्व होने तक यह पेड़ जिंदा रहे। ■

प्रस्तुति: **अश्विनी कुमार निगम**

भाकृअनुप
ICAR

फल फूल

वैज्ञानिक बागवानी की लोकप्रिय द्विमासिकी

वर्ष : 41, अंक : 3, मई–जून 2020

संपादन सलाहकार समिति

1. डा. अशोक कुमार सिंह — अध्यक्ष
उप–महानिदेशक (कृषि विस्तार)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
2. डा. सतेन्द्र कुमार सिंह — सदस्य
परियोजना निदेशक
भाकृअनुप–कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली
3. डा. आर.सी. गौतम — सदस्य
पूर्व डीन
भाकृअनुप–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली
4. डा. एस.के. सिंह — सदस्य
निदेशक
भाकृअनुप–राष्ट्रीय मृदा सर्वेक्षण एवं भूमि उपयोग नियोजन ब्यूरो, नागपुर
5. डा. वाई.पी.एस. डबास — सदस्य
निदेशक (प्रसार)
जी.बी. पंत कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय पंतनगर
6. श्री सेठपाल सिंह — सदस्य
प्रगतिशील किसान
7. श्री सुरेन्द्र प्रसाद सिंह — सदस्य
कृषि पत्रकार
8. श्री अशोक सिंह — सदस्य सचिव
प्रभारी, हिन्दी संपादकीय एकक

संपादक : अशोक सिंह
संपादन सहयोग : सुनीता अरोड़ा

प्रधान प्रोडक्शन अधिकारी : डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
तकनीकी अधिकारी : अशोक शास्त्री

लेआउट डिजाइन
डा. वीरेन्द्र कुमार भारती
अशोक शास्त्री

व्यवसाय सम्पर्क सूत्र
सुनील कुमार जोशी
व्यवसाय प्रबंधक
दूरभाष: 011–25843657
E-mail: bmicar@icar.org.in
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
कृषि अनुसंधान भवन, पूसा गेट, नई दिल्ली–12

एक प्रति: रु. 30.00 वार्षिक : रु. 150.00

E-mail : phalphul@gmail.com

डिस्क्लेमर

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे भाकृअनुप की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार भाकृअनुप–डीकेएमए के पास सुरक्षित है। इन्हें पुन: प्रकाशित करने के लिए प्रकाशक की अनुमति अनिवार्य है। रसायनों–कीटनाशकों की डोज संबंधित संस्तुतियों का प्रयोग विशेषज्ञों से परामर्श के बाद करें।

विषय सूची

संपादकीय — कोरोना संकट में फल–सब्जी प्रसंस्करण से बढ़ाएं आमदनी–अशोक सिंह

3 सगंधीय

हरसिंगार के फूलों से संवर्धित उत्पाद
अंशु करेल और अर्चना करेल

12 बागवानी

किन्नू उगाएं, मुनाफा पाएं
राज कुमार, एम.के. कौल और ए.के. सिंह

19 बचाव

सेब के रोग और समाधान
ऊषा शर्मा, भुपेश गुप्ता, नीलम कुमारी, संतोष और पंकज गुप्ता

26 तकनीक

मटकों में ढींगरी मशरूम का उत्पादन
पवन कुमार पंवार, एस.के. बैरवा और सुरेन्द्र सिंह

32 मूल्य संवर्द्धन

औषधीय पौधों का प्रसंस्करण एवं रोग प्रबंधन
अश्विनी कुमार, प्रमोद गुप्ता और पूर्णिमा सिंह

39 सुपर फूड

सहजन है अनमोल गुणों से भरपूर
पुनिता पी., जे.पी.एस. डबास, प्रतिभा जोशी, सर्वाशीष चक्रवर्ती, निशि शर्मा और नफीस अहमद

48 सफलता गाथा
बटन मशरूम उत्पादन से समृद्धि
दीपक राय, वीनिका सिंह, विवेकानन्द सिंह, राकेश कुमार सिंह और ए.के. दुबे

51 जानकारी
मई–जून में बागों के कार्यकलाप
राम रोशन शर्मा, हरे कृष्णा, स्वाति शर्मा और विजय राकेश रेड्डी

5 वैज्ञानिक खेती

प्याज की उन्नत उत्पादन तकनीक
जगदीश पाटीदार, बरखा शर्मा और चतरा राम कांटवा

15 रूफ गार्डनिंग

छत पर लगायें सब्जियों का बगीचा
अनोप कुमारी, महेश चौधरी और एम.के. पुनिया

24 आय

मखाना से लाभकारी प्रसंस्करित उत्पाद
बी.आर. जाना और मुहम्मद इदरीस

29 मुनाफा

पालक से कमाई
संगीत कुमार, एस.के. धनखड़ और निधि सहगल

37 फल

कैसे लें खुबानी की भरपूर उपज
जितेंद्र कुमार', के.के. प्रामाणिक', ए.के. शुक्ला' और संतोष वाटपाडे'

43 रोगथाम

संतरे में समन्वित कीट एवं रोग प्रबंधन
हरीश वर्मा, शशि कुमार बैरवा और अरविन्द नागर

50 आहार
सोया व्यंजन

आवरण II दुर्लभ वृक्ष
भारत के एकमात्र दोहरे नारियल वाले पेड़ को बचाने की चुनौती

आवरण III मसाला
भारत में होगी हींग की खेती

संपादकीय

कोरोना संकट में फल-सब्जी प्रसंस्करण से बढ़ाएं आमदनी

विश्व भर में कोविड-19 के कारण हुई कोरोना महामारी आज एक व्यापक संकट का रूप ले चुकी है। इससे बचाव के लिए भारत सहित अधिकांश देशों में लॉकडाउन कर दिया गया है। सोशल डिस्टेंसिंग और इस संक्रमण की श्रृंखला को तोड़ने के लिए लोगों के घर से निकलने पर भी पाबन्दी लगा दी गयी है। सरकारी कार्यालयों से लेकर समस्त कल-कारखाने, निजी व्यवसाय, दुकानें आदि भी इस क्रम में बंद कर दिए गए। राज्यों की सीमाएं भी सील की जा चुकी हैं। इस स्थिति से समाज के सभी वर्ग बुरी तरह से प्रभावित हुए हैं। अर्थव्यवस्था का चक्का जाम होने से लोगों के लिए आय जुटाने की समस्या भी उत्पन्न हो गयी है। इसमें कोई दो राय नहीं कि देशव्यापी स्तर पर समूचे कृषक समुदाय को इस अभूतपूर्व परिस्थिति के कारण कई प्रकार की अतिरिक्त चुनौतियों का सामना करना पड़ रहा है। लॉकडाउन के कारण तैयार फसल की कटाई के लिए न सिर्फ श्रमिक मिलने में परेशानी हो रही है बल्कि मंडियों के बंद होने से बिक्री की समस्या भी गहन रूप ले चुकी है। यही नहीं कृषि उपज की ढुलाई के लिए भी काफी प्रयास करने पड़ रहे हैं। इसके साथ ही खेत-खलिहान में सब्जियों और फलों जैसी शीघ्र खराब होने वाली फसलों की बर्बादी की मार भी किसानों को झेलनी पड़ रही है। इससे किसानों की आर्थिक स्थिति के और भी चरमराने का अंदेशा साफ-साफ दिख रहा है।

किसानों की इन व्यावहारिक समस्याओं को ध्यान में रखते हुए देश में कृषि अनुसंधान और शिक्षा का दायित्व संभालने वाली शीर्ष संस्था भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की ओर से कृषक समुदाय के लिए कृषि वैज्ञानिकों से मंथन कर कई तरह के परामर्श जारी किये गए हैं। कृषि विशेषज्ञों के सौजन्य से प्रसारित इन परामर्शों का असल उद्देश्य शीघ्र खराब होने वाली सब्जी-फलों जैसी फसलों को बचाने के लिए वैकल्पिक तौर पर उपलब्ध उपायों के बारे में कृषकों को जागरूक करना है। भाकृअनुप द्वारा सुझाए गए ऐसे उपायों में देश के भिन्न राज्यों में उगाये जाने वाले कृषि उत्पादों के अनुसार प्रसंस्करण तकनीकों को अपनाए जाने पर जोर दिया गया है। इनमें अचार, मुरब्बे, जैम, जेली, टोमेटो प्यूरी, स्क्वैश, मशरूम के मूल्यवर्धित उत्पाद, सॉस से लेकर बड़ियां और पापड़ बनाने तक की सलाह दी गयी है। इस क्रम में मेघालय के स्ट्रॉबेरी उत्पादक किसानों को परामर्श दिया गया है कि विक्रय नहीं होने की स्थिति में वे वाइन सहित जैम-जेली बना सकते हैं। त्रिपुरा के कृषकों को टमाटर से प्यूरी और विभिन्न राज्यों के मत्स्य उत्पादकों को घर पर ही सरसों खल और चावल से मछली चारा तैयार करने के लिए प्रेरित करने का प्रयास किया गया है। इसी तरह दुग्ध से तैयार किये जाने वाले प्रोसेस्ड प्रोडक्ट्स के बारे में भी सोचा जा सकता है।

परिषद द्वारा इस तरह का परामर्श जारी करने का उद्देश्य किसानों को फसल बर्बादी से बचाते हुए घर में रहते हुए प्रसंस्करित उत्पादों को तैयार कर अतिरिक्त आय अर्जन करने के प्रति प्रोत्साहित करना भी है। इनमें से अधिकांश प्रसंस्करित उत्पाद बेहद आसान और परंपरागत तकनीकों से ही पारिवारिक श्रम का उपयोग करते हुए अत्यंत कम लागत में लॉकडाउन के दौरान घर में रहते हुए तैयार किये जा सकते हैं। कहने की जरूरत नहीं है कि ऐसा करने से फलों की बर्बादी को रोकते हुए घर में रहकर ही किसान भाई आमदनी को बढ़ा सकते हैं।

(अशोक सिंह)

हरसिंगार के फूलों से संवर्धित उत्पाद

अंशु करेल* और **अर्चना करेल****

नाइट जैस्मीन परिवार से संबद्ध ओलिएसी को हरसिंगार, पारिजात, जयपरवती जैसे विभिन्न नामों से जाना जाता है। हरसिंगार किस्म *निक्टेन्थस आर्बर-ट्रिस-ट्रिस* लिन्न. भारत का मूल निवासी है और व्यापक रूप से यह उपहिमालय क्षेत्र और दक्षिण में गोदावरी में वितरित है। यह पवित्र और धार्मिक माना जाता है। इसके फूलों और पत्तियों का उपयोग सजावटी और औषधीय प्रयोजनों के लिए किया जाता है। इसके फूल भारत सहित इंडोनेशिया और मलेशिया आदि में अच्छी तरह से जाने जाते हैं एवं सजावटी उद्देश्यों के लिए बगीचों में उगाए जाते हैं।

हरसिंगार के फूलों में एक सुखद खुशबू होती है। इन फूलों में पांच से आठ सफेद लोबिया कोरोला और नारंगी-लाल केंद्रक होता है। सांझ के समय और भोर में खत्म होने वाले ये अलग-अलग फूल दो से सात समूहों में एक साथ पैदा होते हैं। इसमें फ्लेवोनोइड्स, एंथोसायनिन और चमेली के समान तेल मौजूद होता है। फूल के नारंगी ट्यूबलर कोरोला में कैरोटीनॉयड होता है। इसके अलावा यह केसर के समान एक प्राकृतिक रंग एजेंट है और इससे केसरी हल्के पीले से नारंगी रंग प्राप्त होता है। यह गार्निशिंग के लिए विभिन्न डेजर्ट और खाद्य पदार्थों में एक रंग एजेंट के रूप में उपयोग किया जाता है। हरसिंगार से कुछ आवश्यक तेल, रंग पदार्थ (निक्टेन्थिन), मैनिटोल, टैनिन और ग्लूकोज भी फूलों के चमकीले नारंगी कोरोला ट्यूबों से प्राप्त होते हैं। आमतौर पर अर्क को उबालकर या ताजे व सूखे फूलों को पानी में भिगोकर रस प्राप्त किया जाता है। केसरिया रंग की कोरोलरी ट्यूब को ठंडे एवं सूखे स्थान पर एयरटाइट कंटेनर या सील

हरसिंगार के खिले पुष्प

*सह आचार्य, वनस्पति विज्ञान विभाग; **वरिष्ठ अनुसंधान अध्येता (खाद्य और पोषण) विशेषज्ञ, एस.पी.सी.जी.सी., अजमेर (राजस्थान)

महकते-महकाते हरसिंगार के ताजा फूल

बहुउपयोगी हरसिंगार

बंद प्लास्टिक बैग में सुखाया व संग्रहीत कर रखा जा सकता है।

फूलों से अत्यधिक सुंदर मूल्यवर्धित उत्पाद जैसे-माला, गुलदस्ते जैसे सजावटी उत्पाद तैयार किए जाते हैं। इसके साथ ही यह स्वास्थ्य पेय, हर्बल फूलों की चाय, इत्र, आवश्यक तेल, कीट निवारक, सौंदर्य प्रसाधन आदि जैसे उत्पाद बनाने के काम भी आता है। फूलों को सुखाकर विभिन्न प्रकार के उत्पादों का उत्पादन किया जाता है। इसके अलावा कई पिग्मेंट जैसे कि जैंथोफिल्स कैरोटीनॉयड, ल्यूटिन, एंथोसायनिन, आदि जिनमें पोषक तत्व होते हैं, और फार्मास्यूटिकल यौगिक भी इन फूलों से तैयार किए जाते हैं। स्थानीय स्तर पर हरसिंगार के फूलों के मूल्य संवर्धन से किसानों को विशेषकर, महिलाओं को रोजगार सृजन में मदद मिलेगी। चिकित्सीय महत्व के अलावा इसका उपयोग भूख, यकृत और पित्त संबंधी विकारों, पुराने बुखार, मलेरिया बुखार, साइटिका दर्द और गठिया के इलाज के लिए भी किया जाता है।

औषधीय गुणों का खजाना

भावी उपयोग

- बायोफ्लोवोनॉयड, एंथोसायनिन, कैरोटेनॉयड्स और कुछ शर्करा रूप में उनके पोषक तत्व पर ताजा सूखे कोरोलरी ट्यूब का उपयोग करने की संभावनाओं का पता लगाना।
- फूलों को पीसकर या सुखाकर रखा जाए और कैरोटीन, क्लोरोफिल, एंथोसायनिन के पोषण मूल्यों पर इसका प्रभाव एक रंग एजेंट के रूप में पड़ता है।
- खाद्य और स्वास्थ्य उद्योग में इनका निष्कर्षण और उपयोग, शेल्फ-जीवन को ध्यान में रखते हुए।
- महिलाओं के लिए ग्रीटिंग कार्ड, बुकमार्क, वॉल हैंगिंग, पेपरवेट, ड्राई-फ्लावर अरेंजमेंट आदि जैसे फूलों की सूखने की तकनीक, ताजे फूल-आधारित नवीन वस्तुओं के और पॉट-पौरी के रूप में उनकी घरेलू आय को पूरक बनाने में मददगार। इसके साथ ही महिला सशक्तिकरण को बढ़ावा देगा।

संग्रह

ये फूल सितंबर से अक्टूबर के दौरान एकत्र किए जाते हैं। हाथ से तोड़े गए फूलों को ताजा या सूखे रूप में उपयोग किया जा सकता है। फूलों को 2-3 दिनों के लिए छाया में सुखाया जाता है और एक समान आकार का महीन पाउडर तैयार कर लिया जाता है।

फ्लोरल ड्रिंक तैयार करने की विधि

10 ग्राम ताजे फूल या 2 ग्राम सूखी केसरी नलियों को क्रमशः एक लीटर पानी में उबालकर आसानी से यह फ्लोरल ड्रिंक तैयार किया जाता है।

मूल्यवर्धित उत्पाद

भोजन में पूरक के रूप में हरसिंगार के फूलों की लोकप्रियता इसके स्वाद के कारण है। इसे स्वाद और रंग के रूप में कई भारतीय मिठाइयों जैसे-खीर, जलेबी, लड्डू, बर्फी में इस्तेमाल किया जाता है। पश्चिम के देशों में भी कई जगहों पर केक और पुडिंग, कुकी आटा तैयार करने में हरसिंगार के फूलों का प्राकृतिक

फ्लोरल ड्रिंक

खाद्य पदार्थ के रूप में इसके रंग का उपयोग किया जाता है। इनसे तैयार विभिन्न उत्पाद जैसे: रेडी-टू-सर्व पेय पदार्थ, फ्लेवर्ड आइसक्रीम, लोगों के बीच अधिक लोकप्रिय हो सकते हैं। कुल्फी, मीठी टॉफी, लॉली कैंडी, जेलटो, आइसक्रीम व डोनट पर, फ्लेवर स्प्रिंक्ल पाउडर तैयार करने आदि पर काम किया जा रहा है। ■

प्याज की उन्नत उत्पादन तकनीक

जगदीश पाटीदार*, **बरखा शर्मा**** और **चतरा राम कांटवा*****

वातावरण की विविधता एवं विशिष्ट कृषि पारिस्थितिकी जलवायु के कारण भारत में सभी प्रकार की बागवानी फसलें प्राचीनकाल से ही उगायी जाती रही हैं। अपने औषधीय गुणों के कारण प्याज, सब्जी एवं मसाला फसलों में अपना एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। यह एक कंदवर्गीय फसल है और ऐलीएसी परिवार का सदस्य है। इसका वानस्पतिक नाम एलियमसेपा (एल) है। प्याज उत्पादन करने वाले राज्यों में महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, गुजरात व मध्य प्रदेश प्रमुख हैं।

विश्व में क्षेत्रफल के अनुसार प्याज में भारत का स्थान अधिक होने पर भी प्रति हैक्टर उत्पादकता की दृष्टि से इसका स्थान बहुत नीचे आता है। इस स्थिति के लिए उगाई गई किस्में, सस्य क्रियाएं, पोषक तत्वों का प्रबंधन, कीट एवं रोग, परिपक्वता एवं भंडारण आदि कई कारक उत्तरदायी हैं। देश में प्याज की खरीफ फसल की औसत उत्पादकता 8 टन प्रति हैक्टर है, जबकि रबी में यह 12 टन प्रति हैक्टर है।

जलवायु

भारत में प्याज की खेती के लिए अनुकूल जलवायु मुख्यत: रबी मौसम में उपलब्ध है। इसके समुचित विकास के लिए समशीतोष्ण जलवायु अर्थात जहां तापमान न बहुत अधिक और न बहुत कम हो उपयुक्त रहती है। सामान्यत: प्याज की अच्छी बढ़वार के लिए आरंभ में रात्रि का तापमान 10^0-15^0 सेल्सियस, कंद बनने के लिए 20^0-30^0 सेल्सियस तथा खुदाई के समय 30^0-35^0 सेल्सियस चाहिए। इसके साथ 70-75 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता वाले 12-13 घंटे प्रकाश अवधि के लंबे दिनों की आवश्यकता होती है। जबकि प्याज की खरीफ फसल के लिए 10 घंटे प्रकाश अवधि वाले छोटे दिन की आवश्यकता होती है। इसकी बढ़वार के समय यदि तापमान एकदम नीचे गिर जाता है, तो उसमें कंद की बजाय फूल आने लगते हैं।

भूमि

प्याज की खेती सभी प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है। अच्छे उत्पादन के लिए उत्तम जल निकास एवं उच्च कार्बनिक पदार्थयुक्त भुरभुरी बलुई दोमट मृदा (हल्की से मध्यम भारी), जिसका पी-एच मान 5.5 से 6.5 हो, सर्वोत्तम मानी जाती है। इसकी जड़ें जमीन में अधिकतम 15-20 सें.मी. गहराई तक जाती हैं। जड़ों की अच्छी वृद्धि के लिए पर्याप्त मात्रा में नमी तथा वायु का संचार होना आवश्यक होता है।

मृदा की तैयारी

प्याज की जड़ें भूमि की ऊपरी सतह में 15-20 सें.मी. की गहराई तक सीमित रहती हैं। इसलिए भूमि की गहरी जुताई की आवश्यकता नहीं है। भूमि की दो से तीन बार जुताई कर रोटावेटर या पाटा चलाकर 15-20 सें.मी. तक मिट्टी को भुरभुरी बनाकर समतल कर लेते हैं।

खाद एवं उर्वरक

प्याज की फसल को अधिक मात्रा में पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। अत: 20-25 टन प्रति हैक्टर की दर से अच्छी तरह सड़ी हुई गोबर की खाद के अलावा रासायनिक खाद के रूप में खरीफ में 75 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस, 40 कि.ग्रा. पोटाश व 25 कि.ग्रा. जिंक सल्फेट प्रति हैक्टर की आवश्यकता होती है। रबी फसल के लिए 110 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 40 कि.ग्रा. फॉस्फोरस,

*एस.आर.एफ., निक्रा परियोजना; **वैज्ञानिक (गृह विज्ञान); ***वैज्ञानिक (सस्य विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र, कालूखेड़ा, रतलाम (मध्य प्रदेश)

ट्राइकोडर्मा द्वारा प्याज का बीजोपचार

60 कि.ग्रा. पोटाश एवं 45 कि.ग्रा. सल्फर प्रति हैक्टर की आवश्यकता पड़ती है।

खाद एवं उर्वरक देने की विधि

गोबर की खाद को अंतिम जुताई के समय मृदा में मिला दें। फॉस्फोरस तथा पोटाश की पूरी मात्रा व नाइट्रोजन की आधी मात्रा प्याज की रोपाई के समय आधार खाद के रूप में देनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा को दो बराबर भागों में बांटकर रोपाई के 25-30 दिनों बाद व 45-50 दिन बाद खड़ी फसल में सिंचाई उपरांत देनी चाहिए।

बीज की मात्रा

नर्सरी विधि से बुआई के लिए: 8-10 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर

सीधी बुआई के लिए: 18-20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर

कंदों/छोटी गांठों द्वारा बुआई के लिए: 12 क्विंटल कंद प्रति हैक्टर

बीज उत्पादन के लिए (कंद): 20-25 क्विंटल कंद प्रति हैक्टर

बीज उपचार

प्याज के बीज को ट्राइकोडर्मा 6.0 ग्राम या बाविस्टीन 2.5 ग्राम या कार्बेन्डाजिम 63 प्रतिशत + मैन्कोजेब 12 प्रतिशत की 2.5 ग्राम प्रति कि.ग्रा. की दर से उपचारित करना चाहिए। बीजोपचार के समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि दवा प्रत्येक बीज को अच्छे से कवर कर लें।

प्याज के पौधे

बीज की नर्सरी में बुआई और रोपाई का समय

मौसम	बीज बुआई (नर्सरी में)	रोपाई
खरीफ	जून-जुलाई	जुलाई-अगस्त
रबी	अक्टूबर-नवंबर	दिसंबर-जनवरी

पौधों की रोपाई

नर्सरी या पौधशाला में जब पौद 12-15 सें.मी. लंबी हो जाये तब यह मुख्य खेत में रोपने लायक हो जाती है। नर्सरी बुआई के लगभग 45-50 दिनों बाद यह अवस्था आती है। रोपाई के समय पौद की जड़ों को बाविस्टीन 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल में डुबोकर रोपाई करने से जड़गलन रोग की आशंका में कमी आती है। इस प्रकार उपचारित करके खेत में इन पौदों की उथली या उठी हुई क्यारियों में कतार से कतार 15 सें.मी. तथा पौध से पौध 5-7 सें.मी. दूरी रखते हुए रोपाई करनी चाहिए। खरीफ फसल के लिए 15 जुलाई से 15 अगस्त तथा रबी फसल के लिए 15 दिसंबर से 15 जनवरी तक रोपाई की जाती है। खरीफ मौसम में देरी करने व रबी मौसम में जल्दी रोपाई करने से पौधों में फूल निकल आते हैं तथा कंद नहीं बन पाते हैं। रोपाई के बाद हल्की सिंचाई करनी चाहिए। उठी क्यारियों में रोपाई करने पर सिंचाई टपक या बौछार विधि द्वारा करनी चाहिए।

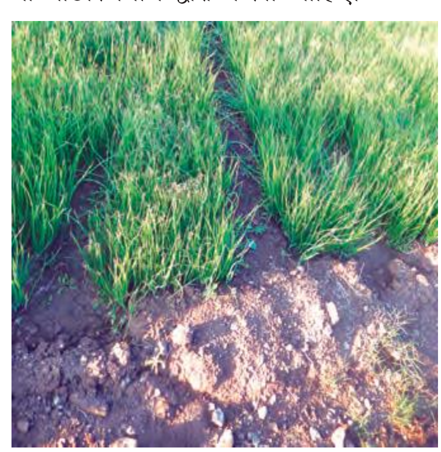

प्याज की तैयार नर्सरी

प्याज की मैगट

यह प्राथमिक रूप से प्याज में लगने वाला कीट है। इस कीट की वयस्क घरेलू मक्खी की तरह दिखाई देती है। मैगट मक्खियां अपने अंडे पुरानी पत्तियों पर मृदा में पौध के आधार के पास देती हैं। नवजात कीट मृदा में नीचे की तरफ चलते हैं व अपने हुकनुमा मुखांग का उपयोग करते हुए आधारी भाग के ऊतक को खाते हुए पौधे के आधार में प्रवेश कर जाते हैं। प्रभावित पौधे पीले भूरे रंग के दिखाई पड़ते हैं, जो अंत में सूख जाते हैं। यह क्षति मुख्यत: उस वक्त दिखाई देती है, जब पौधे नर्सरी अवस्था में होते हैं। यह कीट पौधों को समूह में क्षति पहुंचाता है। इससे खेत में फसल घेरों या धब्बों के रूप में दिखाई देती है। रोगकारक जीवाणुओं द्वारा द्वितीयक संक्रमण की वजह से प्रभावित बल्ब भंडारण में भी सड़ने लगते हैं।

रोकथाम

- फसलचक्र अपनाएं
- अच्छी तरह सड़ी गोबर की खाद का उपयोग करें
- बहुत सघन पौध न लगाएं
- बीजोपचार के लिए किसी कीट वृद्धि नियामक का प्रयोग करें
- फोरेट 10 प्रतिशत की 10 कि.ग्रा. मात्रा बुआई पूर्व या लक्षण दिखाई देने पर उपयोग कर सिंचाई करें या क्लोरोपायरीफॉस 4-5 लीटर/हैक्टर सिंचाई के साथ ड्रेंचिंग करें। उपरोक्त दोनों विधियां 8 सप्ताह तक मैगट पर प्रभावी नियंत्रण रखती हैं।
- निराई-गुड़ाई के बाद फिप्रोनिल 80 प्रतिशत डब्ल्यू.जी. की 2.5 कि.ग्रा. या सायरोमाजिन 75 प्रतिशत डब्ल्यू.पी. की 5.0 कि.ग्रा. मात्रा का प्रति हैक्टर उपयोग कर सिंचाई करें।
- **सैनिक कीट:** यह प्याज का एक द्वितीयक कीट है, जिसके द्वारा पत्तियों की सतह पर अंडे दिये जाते हैं। इसकी इल्लियां पत्तियों की सतह खाती हुई छेद कर पत्ती के अंदर सुरंग बनाकर खाती रहती हैं। प्रभावित पौधों की पत्तियों पर बड़े छेद व विष्ठा पदार्थ दिखता है।

प्रबंधन

- प्यूपा को खत्म करने के लिए खेत की गहरी जुताई करें।
- प्रकाश प्रपंच 1 प्रति हैक्टर लगाएं।
- प्रति हैक्टर 10-15 फैरोमान ट्रैप लगाएं।
- बढ़ती इल्लियों को हाथ से इकट्ठा कर मार दें।
- एस.एन.पी.वी. के 250 लार्वा/हैक्टर के साथ 20 ग्राम गुड़/लीटर पानी का छिड़काव करें। 10 दिनों बाद छिड़काव को पुन: दोहराएं।
- कीट का अधिक प्रकोप होने पर क्विनॉलफॉस 0.5 एम.एल. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

रोपण हेतु तैयारी

निराई-गुड़ाई

अच्छे उत्पादन के लिए प्याज की फसल को खरपतवारों से मुक्त रखना अति आवश्यक होता है। खरपतवारों को नष्ट करने के लिए 2-3 बार उथली निराई-गुड़ाई प्रत्येक 25-30 दिनों के अंतराल पर करते रहें। रासायनिक दवा से खरपतवार का नियंत्रण करना चाहते हैं, तो बासालिन की 2 कि.ग्रा. मात्रा को 600-800 लीटर पानी में घोल बनाकर रोपाई के पूर्व खेत में मिला देना चाहिए।

सिंचाई

रोपाई के तुरन्त बाद हल्की सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। प्याज की जड़ें मृदा में 10-15 सें.मी. की गहराई तक फैलती हैं। इसलिए इस फसल की सिंचाई करते समय 15 सें.मी. से अधिक गहराई तक पानी देने की आवश्यकता नहीं होती है। प्याज की फसल को शुरूआत में हल्की परंतु बहुत कम अंतर पर पानी की आवश्यकता होती है। जड़ें विकसित होने तक खेत में पर्याप्त नमी होना आवश्यक है। पौधों में गांठ बनना आरंभ होने से कंदों के पूर्ण विकास तक (रोपाई के 60-110 दिनों तक) नियमित रूप से सिंचाई की आवश्यकता होती है। अनियमित व कम सिंचाई से दोफाड़ कंदों की संख्या में वृद्धि होती है। इसके विपरीत आवश्यकता से अधिक पानी देने पर मोटी गर्दन वाले प्याज निकलते हैं। इनकी भंडारण क्षमता कम हो जाती है। इस प्रकार रबी मौसम में उथली क्यारियों में 12-15 दिनों तक, जबकि फरवरी से अप्रैल तक 8 से 10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए।

टपक विधि से सिंचाई करने पर शुरूआत में 15-15 दिनों व बाद में 10-10 दिनों के अंतराल पर पानी देते रहें। बहुत गहरा पानी न मिलने से उत्तम गुणवत्ता की उपज प्राप्त होती है तथा उखाड़ते समय कम श्रम शक्ति की आवश्यकता पड़ती है। बौछार विधि से सिंचाई करने पर प्याज के मुख्य शत्रु थ्रिप्स को आसानी से नियंत्रित किया जा सकता है।

प्याज की कंद वाली फसल में निकले हुए फूलों को डंठल सहित तोड़ने के बाद बौछार विधि से सिंचाई नहीं करनी चाहिए अन्यथा प्याज की भंडारण क्षमता कम हो जाती है।

प्याज के प्रमुख कीट

थ्रिप्स

यह प्याज का एक अति सामान्य एवं हानिकारक कीट है, और पूरे भारत में जहां प्याज की खेती की जाती है, उन सभी जगहों पर पाया जाता है। थ्रिप्स प्याज की कंद वाली फसल में 50-60 प्रतिशत तक हानि पहुंचाता है। बीज उत्पादन के लिए लगायी गयी फसल में बीज के उत्पादन के साथ ही साथ उसकी अंकुरण क्षमता को भी यह प्रभावित करता है। यह बहुत छोटा एवं पीले से गहरे भूरे रंग का होता है, जो अपना जीवनचक्र 8-10 दिनों में पूरा करता है।

थ्रिप्स अपने चुभोने व छीलने वाले मुखांगों से पादप कोशिकाओं से द्रव्य निकालकर चूसना शुरू कर देता है। इस प्रक्रिया में यह एक पदार्थ निकालता है, जो पादप कोशिकाओं के पूर्व पाचन में मदद करता है। इसके बाद थ्रिप्स अपने मुखांग द्वारा पौध द्रव्य (तत्व) को चूस लेता है और पौधे को कमजोर बना देता है।

- इसके वयस्क एवं निम्फ नई निकलने वाली कोमल हरी पत्तियों से रस चूसते हैं।

रोपित प्याज का प्रक्षेत्र

- इसके वयस्क मृदा में शीतनिद्रा में, घास पर व प्याज के खेत में उगे अन्य पौधों पर रहते हैं।

सर्दियों में थ्रिप्स कंद के अंदर छुपे रहते हैं और आने वाले वर्ष में संक्रमण वाहक का कार्य करते हैं। उत्तर भारत में मार्च-अप्रैल में व नासिक क्षेत्र में जनवरी-फरवरी में इनकी संख्या तेजी से बढ़ती है। प्रभावित पौधों की पत्तियां मुड़ने के साथ वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है। यदि थ्रिप्स का संक्रमण पौध वृद्धि की प्रारंभिक अवस्था में ही हो, तो कंद बनना पूर्ण रूप से रुक जाता है व पौधा धीरे-धीरे सूखकर मर जाता है।

लक्षण

थ्रिप्स द्वारा शुरूआती क्षति के धब्बे पत्तियों की सतह के खाली पड़े जीवित भाग

प्याज की घुन

घुन के संक्रमण के लिए शुष्क मौसम अनुकूल रहता है। यह कीट भंडारित प्याज को प्रभावित करता है। घुन सामान्यत: झुंड में रहकर प्याज के कंद के जड़ वाले भाग में क्षति पहुंचाती हैं। ये कीट कंदों के बाहरी ऊतकों की परत में प्रवेश कर उन्हें संक्रमित करते हैं। फफूंद व जीवाणुओं को कंद के अंदर प्रवेश करने का मौका मिलने की वजह से पौधे सूखने व सड़ने लगते हैं। कंद के घुन पौधों के खड़े रहने की क्षमता व पादप वृद्धि को कम कर भंडारण में कंद की सड़न को बढ़ा देते हैं। अत्यधिक क्षति वाले पौधे अपनी जड़ें तथा शीर्ष खो देते हैं। यह कीट बीज द्वारा सीधे बोये गए प्याज में पौधे के स्थापित होने के पहले वृंत को काट देते हैं, जिससे पौधे नष्ट हो जाते हैं। उग्र आक्रमण की स्थिति में घुन खाली पड़े पुष्पवृंत में प्रवेश कर जाते हैं।

प्रबंधन

- कार्बनिक पदार्थ के संपूर्ण अपघटन के लिए खेत को खाली छोड़ें। यह प्रक्रिया खेत में घुन की संख्या को कम करती है।
- लगातार एक ही खेत में प्याज की रोपाई करने से बचें।
- बाढ़कृत सिंचाई या शीत ऋतु में तेज वर्षा, मृदा में घुन के स्तर को कम करने में मदद करती है।
- डाइकोफॉल 2.0 मि.ली./लीटर या केल्थेन 1.0 मि.ली./लीटर पानी के अनुसार घोल बनाकर सिंचाई जल के साथ ड्रेंचिंग करें।
- सल्फर पाउडर की 30-50 कि.ग्रा. मात्रा का मृदा में प्रति हैक्टर उपयोग करने से घुन को 3-4 सप्ताह तक प्रभावी रूप से नियंत्रित किया जा सकता है।
- बैन्जाक्वीनोन 0.5 मि.ली./लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

की ओर बढ़ने लगते हैं तथा पत्तियों पर क्षति की उपस्थिति चमकीले धब्बों व धारियों के रूप में दिखाई देती है। ये सूर्य के प्रकाश में चमकती हैं। क्षति स्तर अधिक बढ़ जाने पर छोटे धब्बे पत्ती की अधिकतम सतह पर फैल जाते हैं तथा पौधा पर्याप्त रूप से प्रकाश संश्लेषण नहीं कर पाता है। अत्यधिक आक्रमण होने पर संपूर्ण पौधा सफेद या चमकीला हो जाता है तथा पत्तियां मुरझाने लगती हैं। क्षतिग्रस्त पौधों के कंद शीघ्र परिपक्व हो जाते हैं तथा उनका आकार छोटा रह जाता है।

थ्रिप्स की अधिक संख्या उपज व भंडारण क्षमता, दोनों को प्रभावित करती है। इसके द्वारा पौधों को उनके विकास की अगेती कंद बनने वाली अवस्था पर क्षति पहुंचाई जाती है तो यह अत्यधिक नुकसानदायक होता है। थ्रिप्स कुछ वायरसजनित रोगों के लिए रोगवाहक का काम भी करता है।

नियंत्रण

- थ्रिप्स की संख्या को कम करने के लिए फव्वारा विधि द्वारा सिंचाई करें।
- नाइट्रोजनधारी उर्वरकों का आवश्यकता से अधिक उपयोग करने से बचें।
- नीम बीज कर्नल एक्स्ट्रेक्ट 5.0 मि.ली./लीटर पानी के अनुसार छिड़काव करें।
- अधिक आक्रमण होने पर फसल में डायमेथोएट (रोगोर) 1.0 मि.ली. या थायोमिथोक्जॉम 1.0 मि.ली. या प्रोफेनोफॉस 2.0 मि.ली. प्रति लीटर का पानी में मिलाकर छिड़काव करें व साथ में चिपकने वाले पदार्थ अवश्य डालें।

शीर्ष छेदक

यह एक बहुभक्षी कीट है। उत्तर भारत में शीर्ष छेदक प्याज के बीज के लिए लगायी गयी फसल का यह एक गंभीर कीट है। इस कीट की इल्ली डंठल में अंदर घुसकर अंदर ही अंदर खाती हुई ऊपर की ओर बढ़ते-बढ़ते पुष्पन की प्रारंभिक अवस्था में पुष्पछत्र के आधार तक पहुंच जाती है। बाद में पुष्पछत्र के अंदर प्रवेश कर यह बीजों को खाती है। एक इल्ली कई पुष्पों को क्षति पहुंचा सकती है। इसके परिणामस्वरूप पुष्प पूर्णरूप से सूखकर बीज पूर्णतः खत्म हो जाते हैं। शीर्ष छेदक, प्याज के कंद वाली फसल में पौधों के वायवीय भागों को काटकर व खाकर हानि पहुंचाते हैं। पूर्ण वयस्क इल्ली हरे रंग के साथ शरीर के दोनों ओर गहरे भूरे-धूसर रंग की लाइन लिए हुए 35-45 मि.मी. लंबी होती है।

प्रबंधन

- वयस्क शलभों को आकर्षित कर मारने के लिए प्रकाश प्रपंच लगाएं
- फेरोमोन ट्रैप 10-15/हैक्टर की दर से लगाएं

प्याज की प्रमुख प्रजातियां

खरीफ

एग्री फाउंड डार्क रेडः इस प्रजाति के कंदों का आकार गोल एवं रंग गहरा लाल होता है। इसकी औसत उपज 250-270 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त होती है। यह प्रजाति रोपाई के लगभग 100 दिनों में उखाड़ने के लिए तैयार हो जाती है।

भीमा सुपरः इस प्रजाति के कंद आकर्षक लाल रंग के गोल होते हैं। प्रत्येक कंद का औसतन वजन 70-80 ग्राम तक होता है। इसकी औसत उपज खरीफ में 200-220 क्विंटल प्रति हैक्टर तथा पछेती खरीफ में 400-450 क्विंटल प्रति हैक्टर तक होती है। यह प्रजाति रोपाई के 100-110 दिनों में खुदाई के लिए तैयार हो जाती है तथा प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त है।

भीमा लालः इस प्रजाति के कंद गहरे लाल रंग के होते हैं, जिनका औसत वजन 60-70 ग्राम तक होता है। इसकी औसत उपज 220-240 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त होती है। यह प्रजाति रोपाई के 100-110 दिनों में परिपक्व होकर कंद उखाड़ने के लिए तैयार हो जाती है। भीमा लाल के कंद उखाड़ने के बाद बहुत जल्दी गहरा लाल रंग पकड़ते हैं।

भीमा श्वेताः इस प्रजाति के कंद आकर्षक सफेद रंग के होते हैं, जिनका औसत वजन 60-70 ग्राम तक होता है। इसकी औसत उपज खरीफ में 180-200 क्विंटल प्रति हैक्टर, जबकि रबी में 260-300 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त होती है। यह प्रजाति रोपाई के 100-105 दिनों में परिपक्व होकर कंद उखाड़ने के लिए तैयार हो जाती है। कंदों के परिपक्व होने पर पत्तियां एक साथ जमीन पर गिर जाती हैं। भीमा श्वेता प्रसंस्करण के लिए उपयुक्त है।

एन 53: इस प्रजाति के कंद गोलाकार एवं चपटे बैंगनी लाल होते हैं। इसकी औसत उपज 200-250 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त होती है। यह प्रजाति रोपाई के लगभग 100-110 दिनों में उखाड़ने के लिए तैयार हो जाती है।

रबी

एग्री फाउंड लाइट रेडः इस प्रजाति के कंद गोल, मध्यम से बड़े आकार के और हल्के लाल रंग के होते हैं। इसकी अधिकतम उपज 400 क्विंटल प्रति हैक्टर, जबकि औसत उपज 300-350 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त होती है। यह प्रजाति रोपाई के लगभग 120-125 दिनों में तैयार हो जाती है।

भीमा शक्तिः इस प्रजाति के कंद आकर्षक लाल रंग के होते हैं। इनका औसत वजन 60-80 ग्राम तक होता है। इसकी औसत उपज पछेती खरीफ में 350-400 क्विंटल प्रति हैक्टर जबकि रबी में 280-300 क्विंटल प्रति हैक्टर तक होती है। यह देर से पकने वाली प्रजाति है, जो रोपाई के 125-135 दिनों में परिपक्व होकर कंद उखाड़ने के लिए तैयार हो जाती है। इस प्रजाति के कंदों की भंडारण क्षमता अच्छी है।

पूसा रेडः इस प्रजाति के कंद गोलाकार, चपटे आकार के हल्के लाल रंग के होते हैं। इसकी औसत उपज 250-300 क्विंटल प्रति हैक्टर तक प्राप्त होती है। यह प्रजाति रोपाई के लगभग 125-140 दिनों में उखाड़ने के लिए तैयार हो जाती है।

भंडारण

प्याज को 0^0-2^0 सेल्सियस तापमान व 65-70 प्रतिशत आर्द्रता वाले ठंडे भंडारगृहों में भंडारित करना चाहिए। सामान्यतः खरीफ प्याज की भंडारण क्षमता कम होने के कारण इसे तुरन्त बेच देना चाहिए। रबी प्याज को भंडारित करने के लिए हवादार, नमीरहित व ठंडी जगह में छोटे-छोटे ढेरों के रूप में छिद्रयुक्त पाइपों से तैयार किए गए मचाननुमा भंडारगृहों में रखना चाहिए।

- कीटभक्षी पक्षियों को आकर्षित करने के लिए प्रति हैक्टर 15-20 'T' लगाएं
- इल्ली की प्रारंभिक अवस्था पर 5 प्रतिशत नीम बीज सत्त का उपयोग करें।
- एच.एन.पी.वी. 250 एल.ई. 20 ग्राम गुड़ के साथ घोल बनाकर 10 दिनों के अंतराल पर छिड़काव करें।
- प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. की 2 एम.एल. मात्रा का प्रति लीटर पानी व साथ में चिपकने वाले पदार्थ मिलाकर छिड़काव करें।

कटवा कीट

इस कीट की इल्लियां नर्सरी की क्यारियों व नये रोपित प्याज के खेत में दिखायी देती हैं। ये कोमल पौधों को रात्रि के समय मृदा की सतह के पास से क्षति पहुंचाती हैं। कटवा कीट की इल्ली गहरे भूरे रंग की होती है, जिसका सिर लाल रंग का होता है।

प्रबंधन

- रोपाई के समय खेत में कार्बोसल्फान 1.0 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हैक्टर के अनुसार उपयोग करें।
- क्लोरपायरीफॉस 5.0 एम.एल. प्रति लीटर पानी के अनुसार सिंचाई के साथ ड्रेंचिंग करें।

सफेद गलन

यह प्याज का मृदाजनित रोग है, जो *सलेरिटियम रालफ्सी* और *सलेरिटियम सेपोरियम* द्वारा फैलता है। सफेद गलन रोग प्याज की कंद वाली फसल की अपेक्षा बीज वाली फसल में ज्यादा देखने को मिलता है।

लक्षण

इस रोग में पौधे के जमीन के समीप वाले भाग में सफेद स्केलेरोशिया दिखाई देते हैं। कंद चारों तरफ से सफेद फफूंद से ढक जाते हैं। इससे पौधे का यह भाग गलने लगता है व संपूर्ण पौधा मुरझा जाता है। आगे चलकर बल्ब पर भूरे से काले रंग के स्केलेरोशिया बन जाते हैं।

प्रबंधन

- प्याज नर्सरी की जड़ों को बुआई या रोपाई पूर्व कार्बेण्डाजिम 0.1 प्रतिशत से उपचारित करें।
- खड़ी फसल पर रोग के लक्षण दिखाई देने पर कार्बेण्डाजिम का एक मि.ली./लीटर पानी के अनुसार छिड़काव करें व 7 दिनों बाद कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 3 मि.ली./लीटर पानी के अनुसार 10 दिनों के अंतराल पर 3-4 बार छिड़काव करें।

लीफ माइनर

इस कीट के मैगट पत्तियों की ऊपरी सतह के ऊतकों में सर्पाकार सुरंग बनाते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पत्तियां सूखने लगती हैं।

प्रबंधन

- खेत में सुरंगनुमा पत्तियों को इकट्ठा कर नष्ट करें।
- नीम बीज सत्त (एन.एस.के.ई.) का 3 प्रतिशत या ट्राइजोफॉस 2.0 मि.ली./लीटर पानी के अनुसार घोल बनाकर छिड़काव करें।

प्याज के प्रमुख रोग

आर्द्र गलन

यह प्याज की नर्सरी में लगने वाला मृदाजनित रोग है। इसका समय पर उचित प्रबंधन न होने पर पूरी की पूरी नर्सरी नष्ट हो जाती है। आर्द्र रोग, फसल के अंकुरण पूर्व व अंकुरण पश्चात दो अवस्थाओं में दिखाई देता है। अंकुरण पूर्व की अवस्था में पौद जमीन से बाहर आने के पूर्व ही मर जाती है। अंकुरण पश्चात इससे प्रभावित पौद का शीर्ष जमीन सतह से बाहर आने के बाद पौध जमीन पर गिरने लगता है।

रोग नियंत्रण

- जमीन की सतह से 15 सें.मी. ऊंची उठी हुई नर्सरी क्यारी बनाएं।
- बीजों की 10-15 सें.मी. की दूरी पर पंक्ति में बुआई करें।
- मई-जून में 25-30 दिनों तक 150-200 गेज की पारदर्शी पॉलीथीन से ढककर मृदा का सोलराईजेशन करने से फफूंद नष्ट हो जाती है।
- एक टन नीम खली का प्रति हैक्टर के अनुसार उपयोग करें।
- थीरम या कैप्टॉन की 2.5 ग्राम मात्रा से प्रति कि.ग्रा. बीज को उपचारित कर बीजों की बुआई करें।
- कार्बेण्डाजिम 0.1 प्रतिशत या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत या कैप्टॉन या थीरम 0.25 प्रतिशत से रोग के लक्षण दिखाई देने पर तुरंत मृदा में ड्रेन्चिग करें।

बैंगनी धब्बा

यह रोग मृदा एवं बीजजनित फफूंद *अल्टरनेरिया पोरी* द्वारा फैलता है। बैंगनी धब्बा प्याज का पर्णीय रोग है, जो फसल के वानस्पतिक भागों पर दिखाई देता है। यह रोग प्याज की फसल में मुख्यत: खरीफ मौसम में अधिक दिखाई देता है या रबी मौसम में बादल व कोहरा छाये रहने पर,

प्याज फसल

जब वातावरणीय तापमान 26^0-30^0 सेल्सियस व आर्द्रता 90-93 प्रतिशत हो तथा अधिक नमी वाली अवस्था में ज्यादा दिखाई देता है। इसके लक्षण प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों के पुष्पवृंत पर सफेद रंग के धब्बे बनना है। आगे चलकर ये धब्बे बड़े आकार ले लेते हैं तथा इनका मध्य भाग बैंगनी रंग का हो जाता है।

प्रबंधन

फसल पर प्रारंभिक लक्षण दिखाई देने पर क्लोरोथलोनील या मेटालेक्जिल एम.जैड 2 मि.ग्रा. मात्रा का प्रति लीटर पानी के अनुसार 8-10 दिनों के अंतराल पर 3-4 बार छिड़काव करें।

थ्रिप्स लगी फसल या पत्तियां रोग के प्रति अधिक घातक होती हैं अत: थ्रिप्स का उचित प्रबंधन करें।

चूर्णिल आसिता

यह रोग लेविलुल टाउरिका नामक फफूंद से होता है। चूर्णिल आसिता में सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद रंग के फफूंद के बीजाणु चूर्ण या पाउडर की तरह दिखाई देते हैं। वातावरण में अधिक आर्द्रता व कम तापमान रोग को फैलने में मदद करते हैं। इस वातावरणीय दशा में सफेद चूर्ण पत्तियों पर फैल जाती है तथा पौधे दूर से सफेद दिखाई देते हैं। पौधों की पत्तियों पर भूरे-काले रंग के धब्बे दिखाई देने लगते हैं तथा पत्तियां सूखने लग जाती हैं।

प्रबंधन

- गंधक का 0.2 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें
- स्प्रिंक्लर से सिंचाई करें
- ट्राइकोडर्मा 1.0 ग्राम या प्रोपिकोनाजोल या डिनोकेप 1.0 एम.एल. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें

मृदुरोमिल आसिता

यह रोग *परेनोस्पोरा डेस्ट्रटर* नामक फफूंद

द्वारा होता है। पत्तियों पर छोटे सफेद रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। अधिक आर्द्रता व नमी की अवस्था में धब्बों के मध्य सतह पर हल्के भूरे रंग के कवक तन्तु की वृद्धि देखी जा सकती है। अधिक संक्रमण होने पर पत्तियां तथा अन्य प्रभावी भाग मुलायम होकर लटक जाते हैं व बाद में सूख जाते हैं।

प्रबंधन

रेडोमिल एम.जेड. फफूंदनाशक की 2 ग्राम या मैन्कोजेब 2.5 ग्राम या सेक्टिन (मिनाडोमाइड 10 प्रतिशत + मैन्कोजेब 50 प्रतिशत) की 2 ग्राम मात्रा का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10-10 दिनों के अंतराल पर दो बार छिड़काव करें।

कोलेटोट्राइकम ब्लाइट

यह प्याज का एक महत्वपूर्ण बीजजनित रोग है। इस रोग में पौधे की पत्तियों पर छोटे हल्के पीले एवं जल भराव जैसे धब्बे दिखाई देते हैं, जिन्हें *ऐसरयूल्ली* कहते हैं। प्रभावित पत्तियां झुर्रीदार और सफेद होकर गिरने लगती हैं। प्रारंभिक अवस्था में असामान्य लंबी गर्दन के साथ पत्तियां मुरझाकर हरिमारहित हो जाती हैं। आगे की अवस्था में जड़ें विरल व बल्ब लंबवत आकार ले लेती है।

जड़ गलन

यह एक मृदाजनित रोग है और *फ्यूजेरियम ऑक्सीस्पोरियम* नामक फफूंद से फैलता है। रोग की प्रारंभिक अवस्था में पत्तियां पीली पड़ने लगती हैं। बढ़वार कम हो जाती है। खड़ी फसल के आधारीय भाग के सड़ने की वजह से आगे चलकर पत्तियों के शीर्ष किनारे से नीचे की ओर सूखने लगते हैं। पौधों की जड़ें गुलाबी या लालिमायुक्त होने लगती हैं तथा जड़ें खत्म हो जाती हैं।

प्रबंधन

- कार्बेण्डाजिम के 0.1 प्रतिशत घोल में पौध की जड़ें/कंद या लहसुन की कलियों को उपचारित करके लगायें।
- पौधों की पत्तियां पीली पड़ने या पौधे सूखने की स्थिति में कार्बेण्डाजिम 0.1 प्रतिशत या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत से 10-10 दिनों के अंतराल पर दो बार सिंचाई जल के साथ ड्रेन्चिंग करें।
- खेत में पौधे सूखने की अवस्था में कार्बेण्डाजिम 0.1 प्रतिशत के बाद अगले छिड़काव में कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 0.3 प्रतिशत घोल का 10-10 दिनों के अंतराल पर तीन से चार बार छिड़काव कर रोग को कम किया जा सकता है।

स्टेमफिला ब्लाइट

यह प्याज का महत्वपूर्ण पर्णीय रोग है, जो *स्टेमफिलियम वेसीकेरम* नामक फफूंद से फैलता है। रोग की प्रारंभिक अवस्था में पत्तियों के मध्य में पीली से नारंगी पट्टी विकसित होने लगती है, जो चक्रीय से अंडाकार लंबवत होती है। यह गुलाबी किनारों से घिरी होती है। धब्बों के केन्द्र धूसर से भूरे रंग में बदल जाते हैं। झुलसी हुई पत्तियां गिरने लगती हैं। इस रोग के लक्षण पत्तियों के केवल पृष्ठ भाग पर ही दिखाई देते हैं।

प्रबंधन

- थीरम 2.5 ग्राम/कि.ग्रा. के अनुसार बीज उपचारित करें।
- लक्षण दिखाई देने पर क्लोरोथलोनील 2 ग्राम या मैन्कोजेब 2.5 ग्राम या प्रोपीनेब का 2.5 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर 10-10 दिनों के अंतराल पर चार बार छिड़काव करें।

तैयार प्याज की फसल

बॉट्रायटिस नेक रॉट

यह भंडारण में लगने वाला रोग है। भंडारण में 90 प्रतिशत प्याज बल्बों की सड़न इसी रोग के कारण होती है।

लक्षण

रोग का संक्रमण, कंद की कटिंग के बाद, सामान्य रूप से दिखाई देने वाले गर्दन के ऊतकों से अधिक होता है। लक्षण के प्रथम सूचक के रूप में गर्दन वाले भाग के रोग प्रभावित ऊतक मुलायम होने लगते हैं। रोग का सड़न गर्दन के उतकों के माध्यम से तेजी से नीचे की ओर बढ़ने लगता है। गर्दन के सड़न वाले ऊतकों से नीचे सड़न जल्दी होती है। जब रोगग्रस्त कंदों को काटा जाता है तो गर्दन वाले भाग में भूरे रंग के जल भराव ऊतक दिखाई देते हैं।

प्रबंधन

- फसल उखाड़ने के पहले बेनलेट 0.1 प्रतिशत या कार्बेण्डाजिम 0.1 प्रतिशत का छिड़काव करें।
- क्लोरोपॉयरीफॉस या कार्बेण्डाजिम का उपयोग करके भंडारगृहों को संक्रमणरहित करें।
- कंदों को 32-34^0 सेल्सियस तापमान पर सुखाएं।
- कटाई उपरांत सड़े हुए एवं क्षतिग्रस्त कंदों को छांटकर अलग करें।
- भंडारण में सुचारू रूप से वायु के आवागमन का प्रबंधन करें।

मृदु विगलन

यह भंडारगृहों में लगने वाला एक महत्वपूर्ण जीवाणुजनित रोग है। प्याज में यह इरवीनिया केरेटोवोरा नामक जीवाणु द्वारा फैलता है। मृदु विगलन परिपक्व अवस्था में उखाड़ने के लिए तैयार फसल में तेज बारिश हो जाने पर खेत में भी लग जाता है।

ब्लैक मोल्ड

यह प्याज में भंडारण के दौरान होने वाला एक गंभीर रोग है, जो एस्परजिलस नाइजर नामक मृतोपजीवी कवक से फैलता है। संक्रमण वाले भाग में सफेद माइसिलीयम दिखाई देने लगता है और यह बाद में घने काले घेरे बनाता है। गंभीर अवस्था में कंद की संपूर्ण सतह के साथ-साथ आंतरिक परतों को भी काले रंग का घेरा ढक लेता है।

प्रबंधन

- फसल उखाड़ने के 20 से 25 दिनों पहले कार्बेण्डाजिम 0.1 प्रतिशत या कार्बेण्डाजिम + मैन्कोजेब 0.2 प्रतिशत का छिड़काव करें।
- भंडारगृह में क्लोरोपायरीफॉस 0.1 प्रतिशत से रोगाणुनाशन करें।
- कंदों को 37.8^0 सेल्सियस तापमान व 36 प्रतिशत आपेक्षिक आर्द्रता पर व्यवस्थित रूप से सुखाकर 30^0 सेल्सियस व 50 प्रतिशत सापेक्षिक आर्द्रता पर भंडारित करें।
- भंडारगृह में वायु के आवागमन का सुचारू प्रबंधन करें।
- प्याज को 15^0 सेल्सियस तापमान पर नियंत्रित अवस्था में भंडारित कर ब्लैक मोल्ड रोग के फैलाव को रोका जा सकता है।

लक्षण

मृदु सड़न रोग से प्रभावित खड़ी फसल पत्तियों के गिरने तथा सूखने के लक्षण प्रदर्शित करती है। प्याज कंदों पर मुलायम सड़न के साथ कंदों का रंग उड़ना इस रोग का प्रमुख लक्षण है। रोगग्रस्त कंदों के गूदेदार स्केल के ऊतक जल भराव वाले पीले हल्के भूरे रंग में बदलने लगते हैं। जब सड़न बढ़ने लगती है तो कंद मुलायम हो जाते हैं। सड़न के क्रांतिक स्तर पर प्याज बल्बों या कंदों का संपूर्ण ढेर सड़ने लगता है व भंडारगृह से दुर्गंध आने लगती है।

उपचार

- परिपक्व अवस्था में खेत में खड़ी फसल को उखाड़ने से पूर्व स्ट्रेप्टोसाइक्लीन 200 पीपीएम का छिड़काव करें।
- कंदों को अच्छी तरह सुखाएं।
- भंडारण पूर्व कंदों की छंटाई करें। सड़न वाले कंदों को भंडारण से तुरंत हटा दें।

बौना पीला प्याज रोग

यह प्याज का एक प्रमुख विषाणुजनित रोग है। इस रोग में प्याज के युवा पौधों पर पीली धारियों के रूप में प्रमुख लक्षण दिखाई पड़ते हैं। रोग से प्रभावित प्याज के पौधे की पत्तियां अपना गोलाकार रूप खोकर चपटी हो जाती हैं तथा बाद में मुड़ने लगती हैं। कुछ पत्तियां संपूर्ण पीली पड़ जाती हैं। रोगग्रस्त पौधों के कंद छोटे रह जाते हैं। इसके साथ ही कंदों की गुणवत्ता और उपज प्रभावित होती है।

उपचार

इस रोग का वाहक माहूं है, जिसके लिए इमिडाक्लोप्रिड 5 मि.ली./15 लीटर पानी या रोगोर एक मि.ली./लीटर पानी का छिड़काव कर रोग को कम किया जा सकता है। डेल्टामेथ्रीन या फिप्रोनील कीटनाशक का 0.1 प्रतिशत की दर से छिड़काव करें।

आइरिस पीला धब्बा रोग

यह विषाणुजनित रोग है, जो टोमेटो स्पॉटेड विल्ट वायरस (टोस्पो वायरस) द्वारा होता है। बीज वाले प्याज की पत्तियों तथा पुष्पवृंतों पर आंख के समान भूरे रंग के धब्बे दिखाई देते हैं। बाद में ये धब्बे एक-दूसरे से मिलकर बड़े घेरे बना लेते हैं। प्याज के बीज वृंत सूखकर गिरने लगते हैं तथा बीज की उपज कम हो जाती है। इस रोग से प्याज की बीज वाली फसल, कंद वाली फसल की अपेक्षा ज्यादा प्रभावित होती है तथा उपज घट जाती है। यह रोग थ्रिप्स द्वारा फैलता है। प्याज का प्रमुख कीट थ्रिप्स इस रोग के विषाणुओं के लिए वाहक का कार्य करता है।

उपचार

रोगवाहक, थ्रिप्स के नियंत्रण के लिए कीटनाशी जैसे प्रोफेनोफॉस 0.1 प्रतिशत या कॉर्बोसल्फान 0.1 प्रतिशत या स्पानोस्ड 0.1 प्रतिशत का छिड़काव फसल के साथ-साथ आसपास उगे खरपतवारों पर भी करें। छिड़काव द्रव्य में 0.6 मि.ली./लीटर पानी के अनुसार चिपकने वाले पदार्थ मिलाकर छिड़काव करें। छिड़काव के समय इस बात का विशेष ध्यान रखें कि छिड़काव शाम के समय किया जाए ताकि मधुमक्खी, जो प्याज के बीज वाली फसल के परागण में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है, को नुकसान न हो। हमेशा ध्यान रखें कि रसायनों का छिड़काव सुबह जल्दी या सायंकाल के समय ही करें। ऐसा करने से मधुमक्खियों को नुकसान नहीं होता है और बीज उत्पादन पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है।

पौधशाला तैयार करना

एक हैक्टर क्षेत्र में रोपाई के लिए 500 वर्ग मीटर नर्सरी की आवश्यकता होती है। अच्छी प्रकार तैयार किए गए खेत में एक मीटर चौड़ी व 15-20 सें.मी. ऊंची क्यारी, जिनकी लंबाई 3-5 मीटर हो, आवश्यकता एवं सुविधा अनुसार बना लेते हैं। इन क्यारियों में उपचारित बीजों की पंक्ति से पंक्ति में 5 सें.मी. व बीज से बीज एक सें.मी. दूरी पर रखते हुए, एक सें.मी. की गहराई पर बुआई की जाती है। इसके बाद कम्पोस्ट खाद व मृदा के मिश्रण की हल्की परत से बीजों को ढककर ऊपर से घास-फूस आदि की पलवार बिछाकर हजारे या मिनी स्प्रिंक्लर से हल्का पानी देते हैं।

प्याज उखाड़ना

हरा प्याज

हरे प्याज को उखाड़ने की अवस्था है छोटे-छोटे कंद बन जाना। इस समय इन्हें उखाड़कर बाजार में बेचा जा सकता है।

बल्बों की खुदाई

पौध रोपित फसल रोपाई के लगभग 120-130 दिनों में व बीज से सीधे बोई गई फसल 150-170 दिनों में पककर तैयार हो जाती है, जबकि गांठों से लगाई गई प्याज की फसल 90-100 दिनों में तैयार हो जाती है। किस्म व मौसम के अनुसार कंदों के परिपक्व होने पर नई पत्तियां आनी रुक जाती हैं तथा भोज्य पदार्थ पत्तियों से कंदों में उतरकर उन्हें सुदृढ़ बना देते हैं। पत्तियां पीली होने लगती हैं तथा पौधों के गर्दन के पास से कमजोर होकर गिरने लगती हैं। साधारणतः 30-40

सुगठित प्याज कंद

प्रतिशत पौधों के गर्दन गिरने पर यह माना जाता है कि प्याज खुदाई के लिए तैयार है। खरीफ मौसम में प्याज की खुदाई कंदों के आकार व किस्म की अवधि के अनुसार की जाती है।

प्याज का सुखाना

प्याज को उखाड़ने के बाद पत्तियों समेत 3-4 दिनों तक खेत में कंदों को पत्तियों से ढकते हुए सुखाना चाहिए। इससे प्याज पर सीधी धूप नहीं पड़ती और कंदों की गुणवत्ता खराब नहीं होती है। तीन-चार दिनों तक सूखने के बाद पत्तियों को प्याज से 4-5 सें.मी. लंबी गर्दन (डंडी) छोड़कर काटना चाहिए। इससे धीरे-धीरे यह गर्दन सूखकर कंदों का मुंह बंद कर देती हैं और उनकी भंडारण क्षमता में वृद्धि होती है। अधिक नजदीक से पत्तियों को काटने से प्याज के ऊपरी भाग खुले रहते हैं। इससे रोगकारक (जैसे-फफूंद व जीवाणु आदि) प्याज में आसानी से प्रवेश कर जाते हैं। इस कारण भंडारगृह में प्याज जल्दी सड़ने लगते हैं। इस प्रकार के प्याज में प्रस्फुटन की समस्या भी अधिक आती है।

उपज

अनुकूल परिस्थितियों में उन्नत कृषि तकनीक द्वारा उत्पादन करने पर रबी फसल में अधिकतम लगभग 350-400 क्विंटल प्रति हैक्टर तक उत्पादन प्राप्त होता है। सामान्यतः 60-65 क्विंटल हरे प्याज और 250-300 क्विंटल पके कंद का प्रति हैक्टर उत्पादन होता है।

श्रेणीकरण

अच्छी तरह सूखे हुए कंदों का उनके आकार के अनुसार श्रेणीकरण करना चाहिए। प्याज को मुख्यतः तीन श्रेणियों, बड़े प्याज (6 सें.मी. व्यास से अधिक), मध्यम (4-6 सें.मी. व्यास) तथा छोटे (4 सें.मी. से कम व्यास) में वर्गीकृत करना चाहिए। प्याज श्रेणीकरण के समय दो फाड़, कटे-फटे एवं विकृत कंदों को अलग कर लेना चाहिए। ■

किन्नू उगाएं, मुनाफा पाएं

राज कुमार*, **एम.के. कौल**** और **ए.के. सिंह*****

भारत में फलों के अंतर्गत कुल क्षेत्रफल 6.98 मिलियन हैक्टर तथा वार्षिक उत्पादन 81.28 मिलियन मीट्रिक टन है। वर्तमान उत्पादन फिलहाल देश की 56 प्रतिशत आबादी के लिए ही काफी है, जबकि आज देश में 140 मिलियन मीट्रिक टन फलों की आवश्यकता है। वर्ष 2050 में 183.40 मिलियन मीट्रिक टन फलों की आवश्यकता होगी। इसकी आपूर्ति के लिए फलों के अंतर्गत आने वाले क्षेत्रफल को बढ़ाकर 18.30 मिलियन हैक्टर करने की जरूरत पड़ेगी, अर्थात क्षेत्रफल 2.6 गुना बढ़ाना पड़ेगा। इसी प्रकार राजस्थान में कुल बुआई क्षेत्रफल का 0.08 प्रतिशत ही फलों के अंतर्गत है, जबकि इसका क्षेत्रफल कम से कम 7 से 8 प्रतिशत बढ़ाने के स्तर तक की आवश्यकता है।

किन्नू मुख्य रूप से देश के उत्तरी-पश्चिमी भाग में उगाया जाता है। इसमें राजस्थान के गंगानगर व हनुमानगढ़, पंजाब के कुछ जिले तथा हरियाणा के सिरसा तथा डबवाली क्षेत्र शामिल हैं (सारणी-1)। भारत में कुल 1,02.01 हजार हैक्टर क्षेत्रफल में किन्नू की बागवानी होती है। इसमें से राजस्थान में 14.61 हजार, पंजाब में 46.0 हजार, हरियाणा में 19.40 हजार एवं हिमाचल प्रदेश के 22 हजार हैक्टर क्षेत्रफल शामिल हैं। किन्नू की बागवानी में लगातार क्षेत्रफल बढ़ने का मुख्य कारण इस फल की उत्पादन क्षमता तथा देश में इसकी बढ़ती हुई लोकप्रियता है। इसकी बेहतर उत्पादन क्षमता, अधिक रस की मात्रा तथा अच्छी कीमत के कारण इस फल को दिन-प्रतिदिन बढ़ावा मिल रहा है। किन्नू, देशभर की मंडियों में अपनी एक अलग ही पहचान बना चुका है। इस फल का मुख्य आकर्षण, इसका रंग, 55 प्रतिशत जूस तथा दूर स्थानों तक परिवहन द्वारा जाने में सक्षम होना है।

अभी तक किन्नू को सिर्फ फल के रूप में ही प्रयोग किया जाता रहा है। इस फल के जूस पैकेट भी व्यावसायिक रूप से लोकप्रिय हो रहे हैं। किन्नू के रस को कड़वाहटरहित करने पर भी कार्य किया जा रहा है। इसमें छोटे आकार के किन्नू फल को प्रयोग में लाया जा सकेगा। इस प्रकार प्रसंस्करण से किन्नू की अधिक पैदावार को भी आसानी से उपयोग में लाया जा सकेगा तथा किसान को ज्यादा कीमत मिल सकेगी।

*विषय वस्तु विशेषज्ञ (बागवानी विज्ञान), कृषि विज्ञान केन्द्र-पंचमहल; **पूर्व निदेशक, अनुसंधान, एस.के. राजस्थान कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर; ***प्रधान वैज्ञानिक (बागवानी विज्ञान), केंद्रीय बागवानी परीक्षण, गोधरा (गुजरात)

यह तभी संभव हो सकेगा जब किसान बाग की अच्छी देखभाल करें तथा नर्सरी से फल उत्पादन तक की सभी प्रक्रियाओं को वैज्ञानिक ढंग से अपनायें। पानी की कमी को देखते हुए किसानों को बागों के लिए बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति के साथ-साथ सघन बागवानी पर भी ध्यान देना होगा, ताकि प्रति हैक्टर उत्पादन बढ़ाया जा सके। कीटों तथा रोगों की रोकथाम के लिए वैज्ञानिक तरीके से बगीचे का प्रबंधन करें। खाद तथा उर्वरकों की उपयोग मात्रा मृदा एवं पादप विश्लेषण के आधार पर ही तय करनी चाहिये। इन सब के साथ-साथ फल तुड़ाई उपरांत भंडारण तथा विपणन से संबंधित जानकरी स्वयं रखें।

विपणन के प्रति जागरूकता और फल उत्पादन के सघन प्रयासों से ही इसकी खेती से मुनाफा प्राप्त किया जा सकता है। इस प्रकार विदेशी मुद्रा अर्जित कर किसान सम्पन्न हो सकेगा।

किन्नू उत्पादन में जहां एक ओर बहुत ही उज्ज्वल भविष्य है वहीं दूसरी ओर किसानों को इसके उत्पादन तथा विपणन में कई समस्याओं से जूझना पड़ता है, जो निम्न प्रकार से हैं:

- स्वस्थ तथा गुणवत्तायुक्त पौधों की कमी। यदि हम पौधों के नर्सरी से वितरण को प्रत्यक्ष में लगे बागों के साथ तुलना करें तो इसमें कम से कम 50 प्रतिशत का अंतर नजर आएगा। इसका मुख्य कारण नये लगे बागों में पौधों की मृत संख्या का अधिक होना है। नर्सरी से उपलब्ध पौधों की गुणवत्ता काफी कम होती है। यही कारण है कि स्वस्थ पौधे जो कि रोगरहित तथा उचित मूलवृंत पर तैयार किए जाते हैं एवं उच्च गुणवत्ता वाले मात्र सांकर डाली से लिए गए होते हैं, अधिक महत्वपूर्ण माने जाते हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए रोगमुक्त वायरसरहित पौधे तैयार करने की जरूरत है, ताकि किसानों को उच्च गुणवत्ता वाले पौधे उपलब्ध हो सकें। इसके अतिरिक्त राष्ट्रीय बागवानी मिशन में इलाइट नर्सरी प्रबंधकों को स्क्रीन हाउस के लिए तीन व 18 लाख रुपये की नर्सरी पर 50 प्रतिशत अनुदान की व्यवस्था की गई है।
- पानी की कम उपलब्धता के कारण

किन्नू-एक परिचय

किन्नू एक संकर फल किस्म है, जिसे वर्ष 1915 में डा. एच.बी. फ्रॉसट द्वारा अमरीका के कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय के रीवर साईट में विकसित किया गया था। इस प्रजाति का अनुमोदन वर्ष 1935 में किया गया तथा प्रथम बार व्यापक रूप में यह उगाई गई। इस फल का छिलका न तो संतरे की तरह बहुत ही ढीला होता है न माल्टा की तरह बहुत ही सख्त। वर्ष 1940 में किन्नू का पौधा पंजाब कृषि विश्वविद्यालय तथा अनुसंधान संस्थान लायलपुर (आज पाकिस्तान में है) में प्रथम बार लगाया गया था। आजादी के उपरांत वर्ष 1958 में अमरीका के कैलिफोर्निया से लाकर उत्तर भारत में इसे लगाया गया। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय के अबोहर फल अनुसंधान केंद्र ने पहली बार किन्नू पर अनुसंधान कर इसे किसानों द्वारा लगाने की सिफारिश की। राजस्थान के गंगानगर जिले में उद्यान पंडित सरदार करतार सिंह जी ने इसे पहली बार 1962 में अपने बाग में लगाया। आज इस फल की वजह से गंगानगर की पहचान बनी है। किन्नू का धीरे-धीरे क्षेत्रफल बढ़ता जा रहा है। इसमें बूंद-बूंद सिंचाई के अंतर्गत तीन हजार हैक्टर से अधिक भूमि है।

तुड़ाई

किन्नू के फलों की तुड़ाई के लिए जनवरी के प्रथम सप्ताह से फरवरी के मध्य तक का समय उचित है। फल में घुलनशील तत्व तथा अम्ल की मात्रा (टी. एस. एस.: अम्लता) का अनुपात 12:1 से 14:1 होता है। इसको पौधे पर अधिक समय तक रखने के लिए जिब्रेलिक एसिड 30 पीपीएम तथा 0.1 प्रतिशत कार्बेनडेजिम का छिड़काव नवंबर के अंत में करें। किन्नू के फल की तुड़ाई सूक्ष्म डंडी समेत करनी चाहिए। तुड़ाई के लिए इजराइली कैंची या क्लीपर का उपयोग करना चाहिए ताकि फल एक-दूसरे में छेद न कर पाएं।

किन्नू के फलों की ग्रेडिंग

फलों को तुड़ाई उपरांत धोने के पश्चात ग्रेडिंग तथा मोमीकरण करके शीतगृह में 4^0-5^0 सेल्सियस तापमान पर, जिसमें आर्द्रता 60-90 प्रतिशत हो, रखना चाहिए। इस तरह फलों का संग्रह 50-55 दिनों तक किया जा सकता है।

बढ़ती मांग

किन्नू की मांग बेंगलुरु, चेन्नई, हैदराबाद, कोलकाता, दिल्ली तथा अन्य प्रमुख मंडियों में है। राष्ट्रीय बागवानी बोर्ड ने एक सर्वेक्षण में कहा है कि इसकी मांग हैदराबाद, दिल्ली, रायपुर और भुबनेश्वर की मंडियों में आने वाले समय तक 10-15 गुना बढ़ जायेगी। इसको एक बहुत ही बड़ा उछाल मिलने की संभावना है। इसी प्रकार किन्नू फल की विदेशों में जैसे-श्रीलंका, थाईलैण्ड, मध्य पूर्वी एशियाई देश बहरीन, कुवैत, सऊदी अरब में भी लगातार मांग बढ़ रही है।

बागों की सिंचाई व्यवस्था की ओर खास ध्यान देना पड़ेगा। किसानों को सूक्ष्म फव्वारा तथा बूंद-बूंद सिंचाई पद्धति को अपनाना पड़ेगा। इस कार्य में अनुसंधान पिछले कई वर्षों से चल रहा है। पौधे की आयु तथा मौसम के अनुसार पानी की उपलब्धता की सिफारिश की गई है। इसको ध्यान में रखते हुये पानी देना चाहिए। इसमें फर्टिगेशन (बूंद-बूंद सिंचाई के साथ उर्वरक मिलाकर देना) पर अभी काफी कार्य हो रहा है। किन्नू में सघन पौध के बाग लगाकर भूमि का उचित उपयोग किया जा सकता है तथा प्रति हैक्टर उत्पादन दो से ढाई गुना बढ़ाया जा सकता है। किसान 20×20 फीट की जगह 14×20 फीट की दूरी पर पौधे लगाकर प्रति हैक्टर 256 पौधे के स्थान पर 400 पौधे लगा सकते हैं।

- किसानों को पौधे पर उर्वरकों के प्रयोग के लिए मृदा के साथ-साथ पत्तियों की भी जांच करवानी चाहिए। जांच के आधार पर ही उर्वरकों का तथा सूक्ष्म उर्वरकों प्रयोग करना चाहिए।
- किन्नू के बागों में सबसे बड़ी समस्या फाइटोफ्थोरा नामक रोग से बगीचों में होने वाला नुकसान है। इस कारण प्रत्येक वर्ष काफी मात्रा में बाग सूख रहे हैं। इसके उपचार के लिए रिडोमिल एम.जेड. (1 ग्राम प्रति लीटर) से उपचार किया जा सकता है। इसका अधिक मात्रा में प्रयोग अवांछनीय है। इसमें ट्राइकोडर्मा (80-100 ग्राम प्रति पौधा) का उपयोग लंबे समय तक कारगर होने के साथ-साथ अधिक उपयोगी है।

प्रयोगों के आधार पर किन्नू के लिए जट्टी-खट्टी (सीट्रस जंभेरी लुश) सबसे उपयुक्त मूलवृंत्त पाया गया है। इस वृक्ष को लगाने का उचित समय अगस्त से अक्टूबर तथा फरवरी है। बलुई-दोमट मृदा जिसका पी-एच मान 8.5, विद्युत चालकता 0.5 मि.ली. महोज/सें.मी., कैल्शियम कार्बोनेट 5 प्रतिशत से कम, चूना 10 प्रतिशत से कम तथा सख्त परतरहित हो, किन्नू के लिए उत्तम पाई गई है।

बिक्री के लिए तैयार किन्नू

रोग एवं कीट प्रबंधन

किन्नू में कीट-पतंगों, जैसे-सिट्रससिला, सफेद मक्खी, काली मक्खी, माइट तथा लीफ माइनर के आक्रमण से नुकसान होने की पूरी आशंका रहती है। इनके आक्रमण के कारण किन्नू के बागों को सबसे ज्यादा क्षति पहुंच रही है। इसके अतिरिक्त पिछले कुछ वर्षों से मिलीबग, स्केल, थ्रिप्स, हेलियोथिस तथा फल मक्खी का भी हमला बढ़ रहा है। इनकी रोकथाम के लिए उचित कीटनाशकों से सही समय पर उपचार करना चाहिए। ध्यान रहे कि आवश्यकता से अधिक कीटनाशकों का अंधाधुंध प्रयोग मित्र कीटों को भी हानि पहुंचाता है।

बिक्री

प्राय: किन्नू का विपणन बिचौलियों के माध्यम से होता है। इस कारण किसानों को जितना फायदा मिलना चाहिए उतना नहीं मिल पा रहा है। इसके लिए एक कारगर तथा सुचारू बिक्री तंत्र की आवश्यकता है। किन्नू की तुड़ाई, ग्रेडिंग, मोमीकरण तथा डिब्बाबंदी की तकनीक विकसित की जा चुकी है। यही कारण है कि आज मुख्य किन्नू उत्पादन क्षेत्रों जैसे गंगानगर में सात-आठ पैकिंग व मोमीकरण केंद्र हैं। इसके परिणामस्वरूप किन्नू की मांग भारत की बड़ी-बड़ी फल मंडियों जैसे-दिल्ली, बेंगलुरु, चेन्नई, हैदराबाद, कोलकाता, मुंबई तथा पुणे में खूब बढ़ रही है। पिछले कुछ वर्षों में इसके फलों को यूरोप तथा अन्य देशों में भेजा गया। यह फल श्रीलंका, बांग्लादेश, नेपाल तथा मध्य-पूर्वी एशियाई देशों में काफी लोकप्रिय है। एशिया के अन्य बड़े बाजारों में इसे भेजने के लिए पैकिंग व विपणन के नये तरीकों की खोज की जरूरत है। इसके अतिरिक्त किन्नू को जूस के रूप में भी लोकप्रिय किया जाना चाहिए।

सारणी 1. भारत में किन्नू के अंतर्गत क्षेत्रफल, उत्पादन एवं उत्पादकता (2013-14)

राज्य	क्षेत्रफल (हैक्टर)	उत्पादन (लाख टन)	उत्पादकता (क्विंटल/हैक्टर)
पंजाब	46,000	9.88	21.48
हरियाणा	19402	2.31	11.91
राजस्थान	14616	1.82	12.45

स्रोत: निदेशक, (बागवानी) पंजाब एवं हरियाणा

किन्नू का पौधा 10^0-35^0 सेल्सियस तापमान में अच्छा पनपता है। यह सर्दियों में बहुत कम तापमान तथा गर्मियों में अधिक तापमान सह सकता है। यदि तापमान 0^0 सेल्सियस से कम और 40^0 सेल्सियस से अधिक हो तो पौधे तथा फल पर प्रतिकूल असर पड़ता है। अधिक सर्दियों में फल गिरने की आशंका होती है। किन्नू के फल को फूल से पका फल बनने तक का समय 9 माह का है।

किन्नू में कीट तथा रोगों के अतिरिक्त विषाणु जैसे-ट्रिसटिजा, ग्रीनिंग, रिंग स्पॉट वायरस बहुत ही घातक हैं। इनके कारण अल्प अवधि में पौधे मर जाते हैं। इसके लिए विषाणुरहित पौधों का प्रयोग ही एक मात्र उपाय है। उपरोक्त सुझावों से किन्नू की बागवानी करने से किसान अधिक उत्पादन तथा मूल्य प्राप्त कर सकते हैं।

छत पर लगायें सब्जियों का बगीचा

अनोप कुमारी*, **महेश चौधरी**** और **एम.के. पुनिया*****

एक पुरानी कहावत है जैसा खाए अन्न, वैसा रहे तन और मन। भोजन शास्त्रियों के अनुसार जो आहार हम खाते हैं उसका असर हमारे शरीर, इन्द्रियों, मन एवं बुद्धि पर पड़ता है। आहार ऐसा हो जिससे शरीर की ऊर्जा, विवेक और स्वास्थ्य में वृद्धि हो अर्थात भोजन संतुलित, शुद्ध एवं पौष्टिक होना चाहिए। वर्तमान परिदृश्य में हमारे आहार का एक बड़ा हिस्सा, हानिकारक रसायनयुक्त सब्जियां हैं। इनके कारण पोषक तत्वों की आवश्यक पूर्ति की बजाय हम जाने-अनजाने ऐसे रसायनों का सेवन कर रहे हैं, जो गंभीर रोगों का कारण बन सकते हैं। सब्जियां प्रोटीन, खनिज लवण, कार्बोहाइड्रेट, विटामिन, आवश्यक अमीनो अम्ल, रेशे एवं अन्य महत्वपूर्ण पोषक तत्वों से भरपूर होती हैं। ये हमें स्वस्थ रखने में सहायता करती हैं। इसके साथ ही ये कुपोषण दूर करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। इन्हीं गुणों के कारण इनको 'संरक्षी भोजन' की श्रेणी में रखा गया है।

सब्जियां, मानव शरीर में उच्च रक्तचाप, मधुमेह एवं कैंसर जैसे रोगों से लड़ने की क्षमता प्रदान करती हैं। प्रत्येक व्यक्ति को प्रतिदिन अपने भोजन को पौष्टिक व संतुलित बनाने के लिए लगभग 300 ग्राम सब्जियों का सेवन करना चाहिए। इसमें 125 ग्राम पत्तेदार सब्जियां, 100 ग्राम जड़वाली एवं 75 ग्राम अन्य सब्जियां सम्मिलित होनी चाहिए। आंकड़ों पर गौर करें, तो देश में अभी भी प्रति व्यक्ति सब्जियों की उपलब्धता काफी कम है। जिन लोगों को सब्जियां भरपूर मात्रा में आपूर्ति हो भी रही है उनको भी हानिकारक कीटनाशियों के कारण रोगों का डर हमेशा बना रहता है। शहरों के आसपास गन्दे पानी का सब्जियों के उत्पादन में उपयोग या नालों के पास उगायी गयी सब्जियों में भी कई हानिकारक रसायनों के साथ भारी तत्व मौजूद होते हैं। ये शरीर में गंभीर स्वास्थ्य समस्याएं उत्पन्न करते हैं।

अधिक पैदावार, उनकी चमक एवं ज्यादा से ज्यादा मुनाफा कमाने के लिये खाद्य उत्पादों में रसायनों का प्रयोग काफी बढ़ा है। इससे खाद्यान्न उत्पादों की गुणवत्ता में गिरावट आयी है। इसका मुख्य कारण है शहरी इलाकों में बढ़ती जनसंख्या के कारण जमीन की घटती उपलब्धता एवं सब्जियों के उगाने के आधुनिक तौर-तरीकों से अनभिज्ञता।

*कृषि विज्ञान केन्द्र, मौलासर, नागौर-342304 (कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान); **कृषि विज्ञान केन्द्र, फतेहपुर, शेखावटी-332301, सीकर (श्री कर्ण नरेन्द्र कृषि विश्वविद्यालय, जोबनेर, राजस्थान); ***कृषि महाविद्यालय, नागौर (कृषि विश्वविद्यालय, जोधपुर, राजस्थान)

डिब्बों में धनिया के पौधे

गृहवाटिका के माध्यम से इन सभी परेशानियों से छुटकारा पाया जा सकता है। इससे प्राप्त सब्जियां रसोई का खर्च तो कम करती ही हैं, साथ ही समय का भी सदुपयोग हो जाता है। गृहवाटिका में अपने घर के आसपास खाली पड़ी जमीन पर सब्जियां उगा सकते हैं। जिन लोगों के घर के आसपास जमीन नहीं है वे भी अपने घर की बालकनी, खिड़की के पैनल, छज्जों तथा छत पर गृहवाटिका तैयार कर सकते हैं। छत पर सब्जियां उगाने को रूफटॉप गार्डनिंग (छत पर बागवानी) कहा जाता है। इस प्रकार के सब्जी उत्पादन का मुख्य ध्येय आर्थिक लाभ न होकर परिवार के पोषण स्तर को बढ़ाना तथा घर में ही ताजी शाक-सब्जियों का उत्पादन करना होता है। सब्जियों का चयन परिवार के सदस्यों की इच्छा अनुसार किया जा सकता है।

छत पर गृहवाटिका बनाने हेतु निर्देश

- **स्थान का चुनावः** छत पर सब्जियां उगाने के लिए ऐसे स्थान का चयन करें, जहां पर्याप्त धूप आती हो तथा पानी का समुचित साधन उपलब्ध हो। इसके साथ ही समयानुसार घर के लोग गृहवाटिका में आसानी से काम कर सकें।

बोरियों में उगाई गई पत्तागोभी

ध्यान रखने योग्य बातें

- बेल वाली सब्जियां जैसे-तोरई, लौकी, करेला, सेम फली इत्यादि को दीवार की तरफ लगायें एवं किसी रस्सी के सहारे ऊपर की तरफ चढ़ा दें, जिससे ये अधिक जगह को नहीं घेरें। इसके साथ ही दूसरे अन्य बढ़ने वाले पौधों जैसे-टमाटर, मिर्च, बैंगन इत्यादि को लकड़ी की डंडी का सहारा लगा दें, ताकि वे गिरें नहीं।
- रोपण सामग्री (बीज/पौध) अच्छी गुणवत्ता वाली एवं रोगमुक्त हो। उत्पादन में इनकी महत्वपूर्ण भूमिका होती है। ये सदैव किसी भरोसेमंद स्रोत से ही खरीदें।
- छत पर अधिक गमले रखने की स्थिति में मिट्टी की जगह नारियल के बुरादे का इस्तेमाल किया जा सकता है। यह वजन में हल्का होता है और छत पर अधिक भार नहीं पड़ता।
- गमलों में भरे जाने वाले मिश्रण को 2-3 वर्ष पश्चात बदल दें अथवा उपचारित करें। इससे पौधों में मृदाजनित रोगों के फैलने की आशंका नहीं रहती।
- फसल का चुनाव हमेशा गमले के आकार अथवा फसल के स्वभाव के अनुसार ही करें। पत्तेदार सब्जियां जैसे-धनिया, मेथी, पालक इत्यादि उथले पात्र (जिनकी गहराई अधिक न हो) और गमले में भी आसानी से उगायी जा सकती हैं। बेल वाली सब्जियों के लिए थोड़े गहरे पात्र का चयन करें।
- स्वयं के स्तर पर पौध तैयार करने के लिए प्रो-ट्रे का प्रयोग करें। इससे कम समय में ही अच्छी पौध तैयार की जा सकती है। ध्यान रखें कि बीजों की बुआई गमलों में रोपाई के समय से 20-25 दिन पहले ही कर दें।

सारणी 1. सब्जियों में उपस्थित पोषक तत्व, उनका स्रोत एवं प्रभाव

क्र.सं.	पोषक तत्व	स्रोत	प्रभाव
1.	विटामिन-ए	हरी पत्तेदार सब्जियां, गाजर, शकरकंद, टमाटर, सहजन	रतौंधी, दुर्बलता, त्वचा संबंधी रोग से मुक्ति
2.	विटामिन-बी	मिर्च, टमाटर, मेथी, चौलाई, प्याज, सलाद	त्वचा संबंधी रोग, अपच से मुक्ति
3.	विटामिन-सी	पत्तागोभी, टमाटर, खरबूजा, आलू, हरी पत्तेदार सब्जियां, सहजन, मिर्च, करेला	स्कर्वी रोग, प्रतिरक्षा ह्रास, हृदय रोग से मुक्ति
4.	विटामिन-ई	हरी पत्तेदार सब्जियां, पत्तागोभी	हृदय रोग, मधुमेह, कैंसर से प्रतिरक्षा
5.	विटामिन-के	हरा प्याज, पत्तागोभी, हरी पत्तेदार सब्जियां	रक्त का थक्का बनने में प्रभावी, हड्डी की सुदृढ़ता
6.	रेशा	ताजी हरी सब्जियां, मटर, सेम, तोरई	मधुमेह व हृदय रोग में आराम
7.	पोटेशियम	भुनी हुई आलू या शकरकंद, हरी सब्जियां, कद्दू	उच्च रक्तदाब, शारीरिक सूजन से मुक्ति
8.	फोलिक अम्ल	पालक, सरसों, शतावरी, लेट्यूस, भिंडी, ब्रोकली, ब्रुसेल्स, स्प्राउट	जन्म विकृति, तंत्रिका रोग, कैंसर, हृदय रोग से मुक्ति
9.	मैग्नीशियम	पालक, भिंडी, आलू	हड्डी सुदृढ़ता, तंत्रिका तंत्र एवं दांत प्रतिरक्षा प्रणाली का सुदृढ़ीकरण
10.	सोडियम	हरा प्याज, पत्तागोभी, मूली, टमाटर, गाजर, शकरकंद	मांसपेशी कमजोरी, तंत्रिका तंत्र के दर्द में राहत
11.	लोहा	पालक, बैंगन	खून की कमी को रोकना
12.	सल्फर	मूली, प्याज, लहसुन	बालों का झड़ना एवं नाखुन सफेद होने से रोकना
13.	कैल्शियम	सेम, मटर, फूलगोभी, कद्दू	दांतों की मजबूती, रक्तदाब संतुलन, हड्डी सुदृढ़ता

- **गृहवाटिका का आकारः** यह परिवार के सदस्यों की संख्या पर निर्भर करता है। यह कार्य कहीं भी खाली पड़ी जगह जैसे-बालकनी, छज्जा आदि पर गमलों के माध्यम से किया जा सकता है। पांच सदस्यों वाले एक परिवार की दैनिक जरूरतों को पूरा करने के लिए लगभग 100-125 वर्गमीटर स्थान पर्याप्त होता है।

छत पर गृहवाटिका का महत्व

- **स्वस्थ एवं ताजी सब्जियों की उपलब्धता:** घर पर उगायी गयी सब्जियां बाजार से लायी गयी सब्जियों की अपेक्षा अधिक ताजी, पौष्टिक, स्वादिष्ट व सुरक्षित होती हैं।
- **स्वास्थ्य की दृष्टि से अच्छा शौक:** गृहवाटिका स्वास्थ्य की दृष्टि से भी एक बहुत अच्छा शौक है। यह न केवल व्यक्ति को सप्ताह भर कुछ घंटे के लिए व्यस्त रखती है बल्कि प्रकृति की गोद में होने का अहसास भी करवाती है। आज की भागदौड़ वाली जिंदगी में मानसिक तनाव से मुक्ति दिलाने में भी यह मददगार साबित होती है।

डिब्बों में सब्जी उत्पादन

- **खाली पड़े स्थान का सदुपयोग:** गृहवाटिका में घर की बालकनी, छज्जों, दीवारों अथवा छत के खाली स्थान का उचित उपयोग कर सकते हैं। विभिन्न ऊंचाई के पौधे लगाने से प्रदूषण में कमी आती है। इसके साथ ही यह छत के तापमान को भी कम रखने में सहायक होती है।
- **ज्ञानवर्धक:** इसमें तरह-तरह की सब्जियां उगायी जा सकती हैं, जिससे परिवार के सभी सदस्यों को इनका नाम, उगाने का तरीका, कीट-रोगों के नियंत्रण के तरीके इत्यादि के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।
- **पोषण सुरक्षा:** वर्तमान में महिलाओं एवं दूरदराज के इलाकों में कुपोषण की गंभीर समस्या है। गृहवाटिका के माध्यम से हम एक इकाई के रूप में परिवार के पोषण स्तर में सुधार ला सकते हैं।
- **सरल एवं सस्ती तकनीक:** सब्जियों को लगाना आसान एवं काफी सरल होता है। इसके साथ ही इससे पैसे की भी बचत हो जाती है। गृहवाटिका में बेकार पड़े डिब्बों, थैलियों, पेटियों, बाल्टियों आदि का उपयोग सब्जियां उगाने के लिए कर सकते हैं।
- **घर की सुन्दरता में बढ़ोतरी:** गमलों अथवा अन्य पात्रों के माध्यम से सब्जियों को उगाने से घर की सुन्दरता कई गुना बढ़ जाती है। इसके साथ ही यह घर में ताजगी का अहसास करवाती है।

सारणी 2. विभिन्न प्रकार की सब्जियों की बुआई का समय

क्र.स.	मौसम	बुआई का समय	फसल
1.	ग्रीष्मकाल	जनवरी-मार्च	लौकी, करेला, तोरई, मिर्च, चौलाई, भिंडी, बैंगन, लोबिया, कद्दू, टमाटर, फ्रेंचबीन, ककड़ी, खीरा, ग्वार, घिया, टिंडा
2.	खरीफ	जून-जुलाई	मिर्च, टमाटर, बैंगन, भिंडी, ग्वार, लौकी, खीरा, फ्रेंचबीन, सेम, प्याज, लोबिया, खीरा, ककड़ी
3.	रबी	सितंबर	गोभीवर्गीय सब्जियां, चुकंदर, सरसों, सलाद, बैंगन, गाजर, मेथी, प्याज, पालक, मटर, शलजम

- **गमलों/पात्रों का चयन:** छत पर सब्जियां उगाने के लिए आजकल बाजार में अलग-अलग आकार के बैग उपलब्ध हैं, जो कि वजन में भी काफी हल्के होते हैं। सीमेंट अथवा प्लास्टिक के गमले, कबाड़ में पड़ी अनुपयोगी वस्तुएं जैसे-बाल्टी, डिब्बे, लकड़ी की पेटियां, प्लास्टिक की बोरी, ट्रे, मटके आदि का भी उपयोग इस उद्देश्य के लिए किया जा सकता है। गमलों का आकार उगायी जाने वाली फसल पर निर्भर करता है, परंतु इनका आकार 12 इंच से कम भी नहीं होना चाहिए। लोहे के डिब्बों की जगह मिट्टी के गमलों को वरीयता दें, क्योंकि लोहे व प्लास्टिक के गमले अत्यधिक गर्म व ठंडे हो सकते हैं। गमलों से अतिरिक्त पानी निकालने के लिए नीचे छेद अवश्य करें, नहीं तो पानी इकट्ठा होने से जड़ों में सड़न हो सकती है।
- **गमलों/पात्रों में मिश्रण की भराई:** गमलों को भरने के लिए बराबर मात्रा में मिट्टी, बालू/रेत और सड़ी गोबर की खाद या कम्पोस्ट का मिश्रण बना लें। तैयार मिश्रण में 10-15 ग्राम ट्राइकोडर्मा फफूंदनाशी अवश्य मिला दें, जिससे फफूंद से फैलने वाले रोगों से भी बचा जा सके। ध्यान रखें कि गमलों के पेंदे में किए गए छेदों पर कंकड़ या मिट्टी के बर्तनों का टुकड़ा इस प्रकार रखा जाए कि अतिरिक्त पानी की निकासी हो सके। गमलों में मिश्रण भरते समय यह भी ध्यान रखें कि गमले ऊपर से थोड़े खाली रहें। छत खराब न हो, इसके लिए एक मोटी पॉलीथीन की चादर बिछाकर उसी पर ये गमले रखे जा सकते हैं। वर्तमान समय में प्लास्टिक बैग अथवा गमलों को भरने के लिए नारियल का बुरादा (कोकोपिट) भी उपयोग में लाया जा रहा है। यह नारियल के कवच के रेशों से तैयार किया जाता है। इसमें पानी सोखने की क्षमता अधिक रहती है व वजन में काफी हल्का होता है।
- **बुआई का समय व तरीका:** मौसम के अनुसार सब्जियों का चयन करें। सारणी-2 के अनुसार फसल का चुनाव करके इनकी बुआई अथवा रोपण किया जा सकता है। बुआई की तकनीक के अनुसार सब्जियां दो तरीकों से लगायी जाती हैं:
  - **पौध तैयार करना:** छोटे आकार की बीज वाली सब्जियां जैसे-टमाटर, मिर्च, बैंगन, गोभीवर्गीय सब्जियां, प्याज, सलाद इत्यादि की पौद तैयार करके रोपाई की जा सकती है।

- **सीधे बीज द्वारा:** जिन सब्जियों के बीज बड़े आकार के होते हैं उनका प्रवर्धन बीज द्वारा किया जाता है जैसे-भिंडी, मटर, पालक, मेथी, सेम फली, लहसुन, गाजर, मूली, धनिया इत्यादि। इनकी बीज से बुआई कर सकते हैं। पौध की रोपाई हमेशा शाम के समय ही करें एवं रोपण के पश्चात झारे से हल्का पानी जरूर दें।

तुड़ाई के लिए तैयार मिर्च

- **सिंचाई प्रबंधन:** गमलों में सिंचाई प्रबंधन का ध्यान रखना अति आवश्यक है। अत्यधिक पानी अथवा कम पानी दोनों ही स्थितियों में पौधे पर विपरीत प्रभाव पड़ता है। पानी हल्का परंतु एक नियमित अंतराल पर दें। अत्यधिक पानी देने से गमलों में से पौधों के आवश्यक पोषक तत्वों का ह्रास तो होगा ही, साथ में पौधों में रोगों के फैलने की आशंका बनी रहेगी।
- **खाद एवं पोषक तत्व प्रबंधन:** गमलों को भरते समय यह ध्यान रखें कि जो भी मिश्रण गमले में भरने जा रहे हैं, उसमें पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व उपलब्ध हैं या नहीं। अन्यथा पौधों की वृद्धि एवं उपज दोनों पर ही विपरीत प्रभाव पड़ेगा। खाद एवं उर्वरकों का मुख्य उद्देश्य पौधों के समुचित विकास एवं बढ़वार के साथ ही उगाये जाने वाले माध्यम में अनुकूल पोषण दशाएं बनाए रखना होता है। गमलों के लिए घर पर कम्पोस्ट तैयार की जा सकती है। इसके अलावा वर्मीकम्पोस्ट, जो कि सहजता से उपलब्ध हो जाती है, भी अच्छी मानी जाती है।
- **निराई-गुड़ाई एवं खरपतवार प्रबंधन:** गमलों में सब्जियों की बुआई के कुछ समय पश्चात विभिन्न प्रकार के खरपतवार उग आते हैं। ये उगाई गयी सब्जी के साथ पोषक तत्वों, स्थान, नमी आदि के लिए प्रतिस्पर्धा करते रहते हैं। इसके साथ ही ये विभिन्न प्रकार के कीट एवं रोगों को भी आश्रय प्रदान करते हैं, जब खरपतवार छोटा रहे, उसी समय हाथ से बाहर निकाल दें एवं हल्की निराई-गुड़ाई कर दें। गमलों में भरने के लिए यदि नारियल का बुरादा प्रयोग किया है तो इनकी समस्या ज्यादा नहीं आती है।
- **कीट एवं रोगों की रोकथाम:** बीजों की बुआई अथवा पौध रोपण के पश्चात उनमें कई बार कीट एवं रोगों का आक्रमण भी हो जाता है। ऐसी परिस्थितियों में इनके नियंत्रण के लिए रासायनिक कीटनाशियों के स्थान पर जैविक कीटनाशियों का प्रयोग करें। आजकल बाजार में विभिन्न प्रकार के जैव फफूंदनाशी/ कीटनाशी आसानी से उपलब्ध हैं। ये सब घर पर भी आसानी से तैयार किए जा सकते हैं। बहुत से वृक्ष एवं पौधों की पत्तियां अथवा बीजों के अर्क का उपयोग नाशीजीवों के नियंत्रण में किया जा सकता है। जैव कीटनाशियों के रूप में नीम अर्क एवं तेल, नीमास्त्र, ब्रह्मास्त्र, गौमूत्र, दशपर्णी सत्त इत्यादि का उपयोग किया जा सकता है।
- **सब्जियों की तुड़ाई:** तुड़ाई की अवस्था फसल के स्वभाव पर निर्भर करती है। उदाहरण के लिए लौकी, भिंडी, ग्वार, करेला को कच्ची अवस्था में ही तोड़ लिया जाता है, परंतु टमाटर को पकने पर तोड़ा जाता है। ■

प्लास्टिक ग्रो बैग में सब्जियों की फसल

सेब के रोग और समाधान

ऊषा शर्मा*, भूपेश गुप्ता*, नीलम कुमारी, संतोष और पंकज गुप्ता***

सेब शीतोष्ण क्षेत्र का प्रमुख फल है। भारत में सेब मुख्य रूप से उत्तर-पश्चिमी पर्वतीय राज्यों जैसे-जम्मू एवं कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड में उगाया जाता है। देश के उत्तर-पूर्वी हिस्से में एक सीमित क्षेत्र में अरुणाचल प्रदेश, नागालैंड, मिजोरम और सिक्किम जैसे कुछ राज्यों में ही इसका उत्पादन किया जाता है। सेब के उत्पादन में हिमाचल प्रदेश देश का सबसे अग्रणी राज्य है। इस राज्य की अर्थव्यवस्था कृषि व पर्यटन पर ही मूल रूप से आधारित है। इसकी बागवानी हिमाचल प्रदेश में लगभग एक लाख हैक्टर क्षेत्रफल पर की जाती है। इससे लगभग सात लाख मीट्रिक टन सेब का उत्पादन होता है। सेब उत्पादन से फल उत्पादकों तथा प्रदेश की वित्तीय और आर्थिक स्थिति में सुधार आया है। यह हिमाचल प्रदेश में प्रायः शिमला, कुल्लू, किन्नौर, सिरमौर, लाहौल-स्पीति और मंडी जिलों में उगाया जाता है। इसका उत्पादन 1500 मीटर से 2400 मीटर की ऊंचाई तक सफलतापूर्वक किया जा सकता है। पिछले कुछ वर्षों से इसके अंतर्गत क्षेत्रफल में जितनी वृद्धि हुई है उसकी तुलना में उत्पादन में वृद्धि नहीं हो पा रही है। इसके मुख्य कारण हैं मौसम में बदलाव, सेब उत्पादन के खर्चे तथा नित नए-नए रोग के बढ़ते प्रकोप आदि।

हिमाचल प्रदेश की आर्थिकी में सेब की बागवानी का महत्वपूर्ण योगदान है। यह एक बहुत ही लाभदायक व्यवसाय है। सेब की बागवानी में बहुत अधिक रोगों के प्रकोप का होना चुनौती के रूप में सामने आया है। इसके पत्तों व फलों का रोग प्रबंधन मृदाजनित रोगों की अपेक्षाकृत ज्यादा आसान है। सेब के विभिन्न मृदाजनित रोगों के लक्षण एवं उनके प्रबंधन पर इस लेख में विस्तारपूर्वक चर्चा की गयी है।

पतझड़ व धब्बा रोग

हिमाचल प्रदेश में नब्बे के दशक के बाद से सेब में लगने वाले रोगों में असामयिक पतझड़ का प्रकोप बगीचों में काफी देखा जा रहा है। इस रोग के लक्षण पत्तियों व फलों पर दिखाई देते हैं। प्राथमिक संक्रमण बसंत ऋतु में फफूंदजनित बीजाणुओं द्वारा होता है। छाया व अधिक नमी वाले क्षेत्र में उगने वाले पौधे ज्यादा संवेदनशील होते हैं और जल्दी संक्रमित हो जाते हैं।

प्रबंधन

इन रोगों के प्रबंधन के लिए बगीचों से खरपतवार और झाड़ियों को हटाकर साफ करना चाहिए, ताकि वातावरण में अधिक नमी न पनप पाए। सर्दियों में पौधों की

*यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, क्षेत्रीय बागवानी अनुसंधान एवं प्रशिक्षण केन्द्र, मशोबरा, शिमला-171007 (हिमाचल प्रदेश); **भाकृअनुप-आईएआरआई, क्षेत्रीय केन्द्र, शिमला-171004 (हिमाचल प्रदेश)

उचित काट-छांट होनी चाहिए, जिससे धूप की किरणें अधिक से अधिक पौधों के अंदर जा सकें तथा हवा का उचित प्रवाह हो सके। सर्दियों में नीचे गिरी हुई पत्तियों को इकट्ठा करके गड्ढे में डालें या 5 प्रतिशत यूरिया का छिड़काव इन पत्तियों पर करना चाहिए। इससे फफूंद की शीतपारण अवस्था को खत्म करने में मदद मिलती है। असामयिक पतझड़ रोग से बचाव के लिए संस्तुतियों के अनुसार समय-समय पर व सही मात्रा में फफूंदीनाशक दवा का छिड़काव करना चाहिए।

चूर्णिल आसिता रोग

यह रोग पत्तियों, कलियों, हरी टहनियों और फलों को प्रभावित करता है। इससे पत्तियों की निचली सतह पर पीले रंग के धब्बे दिखाई देने लगते हैं। उपयुक्त वातावरण के होते ही यह रोग पत्तियों व डंडियों से बढ़ते हुए हरी टहनियों तक फैलता है। संक्रमित पत्तियां मुड़कर सख्त एवं भंगुर हो जाती हैं। संक्रमित अग्र अंकुरित टहनियां बौनी रह जाती हैं। यह रोग संक्रमित कलिकाओं के खिलते ही कवकजाल वृद्धि करता है और टहनियों को संक्रमित करता है। प्रभावित टहनियां ज्यादातर बसंत ऋतु में मर जाती हैं और अगर बच भी जाएं तो शीतकाल में इनकी मृत्यु हो जाती है। फफूंद की आरंभिक वृद्धि में नई संक्रमित कलिकाएं फल पैदा करने में सक्षम नहीं होती हैं और यदि ऐसी कलिकाओं पर फल लग जाएं तो उनका आकार छोटा रह जाता है। उन पर रस्सैटिंग के लक्षण दिखाई देते हैं। इस रोग के लक्षण ज्यादातर परागण किस्मों में देखे जा सकते हैं।

प्रबंधन

पौधों की काट-छांट करते समय रोगग्रस्त टहनियों तथा शाखाओं को काटकर नष्ट कर देना चाहिए। हरी कली, पंखुड़ी झड़ने, फल स्थापन अवस्था व सुषुप्तावस्था के अंत में अधिक संक्रमित पौधों पर अनुमोदित फफूंदनाशकों का छिड़काव रोग के लक्षण दिखते ही कर देना चाहिए। 14-15 दिनों के पश्चात फिर से छिड़काव करना चाहिए।

असामयिक पतझड़ रोग

स्कैब रोग

यह रोग मुख्यत: पत्तियों, फलों व हरी टहनियों पर पाया जाता है। हिमाचल प्रदेश के सेब उत्पादन वाले क्षेत्रों में अस्सी के दशक में स्कैब रोग ने महामारी का रूप धारण किया था। वैज्ञानिकों के उत्कृष्ट अनुसंधान, उद्यान विभाग व बागवानों के सामूहिक प्रयासों से इस महामारी पर कुछ ही वर्षों में नियंत्रण पा लिया गया। बागवानों को आज भी इस रोग के प्रति सचेत रहना चाहिए।

प्रबंधन

रोग के लिए पूर्वानुमान तकनीक द्वारा नियंत्रण उपायों का अनुसरण करना चाहिए। पूर्वानुमान प्रणाली द्वारा नियंत्रण उपायों को सुनिश्चित किया जा सकता है। अगर रोग के होने का पूर्वानुमान लगाया जाता है या रोग के लक्षण बगीचों में दिखें तो बागवानी विभाग व विश्वविद्यालय द्वारा अनुमोदित फफूंदनाशकों का प्रयोग करना चाहिए। गिरी हुई संक्रमित पत्तियों को एकत्रित करें और कम्पोस्ट के रूप में गड्ढे में डालकर सड़ा दें। अन्यथा 10 प्रतिशत यूरिया के घोल का छिड़काव गिरी हुई पत्तियों पर करना चाहिए ताकि पत्तियां जल्दी सड़ जाएं व स्कैब की फफूंद शीतपारण न कर सकें।

कैंकर रोग

भारत में लगभग 13 प्रकार के कैंकर रोग सेब में पाए जाते हैं, जिन्हें लक्षण के आधार पर नाम दिए गए हैं। हिमाचल प्रदेश में मुख्यत: छ: प्रकार के कैंकर रोग पाए जाते हैं, जिनमें धुंएदार, कागजी खाल, गुलाबी, भूरा तना, काला तना, नेल हैड कैंकर इत्यादि का प्रकोप बगीचों में अधिक पाया गया है। कैंकर रोग फफूंदजनित होता है व प्राय: यह पौधे के कटे हुए एवं घाव वाले भाग से फैलना आरंभ होता है तथा कई तरह के घाव बनाता है।

धुंएदार कैंकर

इस रोग के लक्षण तीन तरह से ग्रस्त पौधे पर देखे जा सकते हैं। ये पत्तियों पर आंख के आकार के दाग, फल सड़न तथा शाखाओं व तने के कैंकर के रूप में होते हैं। तनों व शाखाओं पर इस रोग के लक्षण अधिक देखे

अल्टरनेरिया धब्बा रोग

रोग पनपने वाले वातावरण का प्रबंधन

मृदाजनित रोगों के पनपने के लिए पौधों के तने के पास अथवा नर्सरी में खुला पानी या अत्यधिक नमी एक तरह का वांछित वातावरण होता है। इसमें अधिक देर तक पानी न ठहरे इसके लिए बजरी या रेत का ढेर लगाएं या बाहर नालियां खोदकर पानी की निकासी की व्यवस्था सुधारें:

- यदि पी-एच मान 6.2 से कम हो तो चूने के उपयोग द्वारा पी-एच मान सुधारें।
- नर्सरी लगाने से पहले खेत की सिंचाई कर 40-45 दिनों के लिए 100-150 गेज की प्लास्टिक शीट से ढककर सौर ऊर्जा द्वारा उपचारित करें।
- मृदा में नीम खली, देवदार, निर्गुण्डी, लहसुन इत्यादि की पत्तियों को मिलाने से भी मृदाजनित रोगों को नियंत्रित किया जा सकता है।

धुएंदार कैंकर रोग

जाते हैं। रोगग्रस्त तनों व शाखाओं पर लाल व भूरे रंग के छोटे-छोटे दबे हुए धब्बे बनते हैं। ये बाद में चक्रित व धुंएदार हो जाते हैं। शाखाओं में इस रोग का विस्तार चौड़ाई की अपेक्षा लंबाई में तीव्र गति से होता है।

पेपरी बार्क कैंकर

यह रोग चांदीनुमा पत्तियों के नाम से भी जाना जाता है। ग्रीष्म ऋतु में पत्तियों की सतह पर चांदीनुमा चमक दिखाई देती है। बाद में शाखाओं पर फफोलों के रूप में इस रोग की शुरूआत होती है। प्रभावित शाखाओं में गोंद बन जाने से पौधों में पानी व तत्वों का आवागमन अवरुद्ध हो जाता है तथा इसके फलस्वरूप शाखाएं मुरझाकर सूख जाती हैं।

भूरा तना कैंकर

तने पर भूरे रंग के छोटे-छोटे धब्बे पड़ने के साथ इसकी शुरूआत होती है। इसके फलस्वरूप तने पर हल्के भूरे रंग के घाव बन जाते हैं और अंत में टहनियां सूख जाती हैं।

पिंक कैंकर

इस रोग की शुरूआत शाखाओं के द्विभाजन स्थल से होती है। संक्रमण ऊपर से नीचे की ओर एक साथ फैलता है। रोगग्रस्त भागों में धंसे हुए हल्के भूरे रंग के धब्बे बनते हैं। ये एक मकड़ी के जाल की तरह दिखते हैं। सामान्यत: कवक जाल शाखा की ऊपरी सतह में ही रहता है। वर्षा ऋतु में यह धीरे-धीरे गुलाबी रंग की पपड़ी में बदल जाता है। ऐसी अवस्था में रोग कुछ दूरी से अच्छी तरह पहचाना जा सकता है।

पिंक कैंकर रोग

यूरोपियन कैंकर

इस रोग में फफूंद पुराने कांट-छांट वाले स्थानों, पत्तियों व फलों के घाव की जगह से प्रवेश करती है। यूरोपियन कैंकर के घावों के चारों ओर घेरा सा बनता है, जो प्रत्येक वर्ष बढ़ता रहता है। सर्दियों के महीनों में पुराने घावों पर फफूंद के बीजाणु उत्पन्न होते हैं और ये रोग को बढ़ाने में मदद करते हैं। यह रोग अक्सर मोटी टहनियों या तने पर घेरा बनाता है, जिसकी वजह से टहनियों का आगे वाला भाग सूख जाता है।

प्रबंधन

विभिन्न उपायों का एकीकृत रूप में उपयोग ही बगीचों को रोगरहित रखने में सहायक हो सकता है। इसके लिए निम्न कार्यकलाप करें:

- पौधों की सिधाई व कांट-छांट इस तरह से करें कि सूर्य की रोशनी सीधी शाखाओं पर न पड़े।
- जहां तक हो सके मोटी टहनियों को 40-60 डिग्री के कोण पर रखें।
- फल तुड़ाई के बाद एक छिड़काव बोर्डो मिश्रण का अवश्य करें।
- कैंकरग्रस्त शाखाओं को काटकर जला दें।
- जहां तक संभव हो बड़े आकार के घाव न बनाएं।
- घाव पर चौबटिया पेस्ट (लाल सिंदूर 800 ग्राम + कॉपर कार्बोनेट 800 ग्राम + अलसी का तेल एक लीटर) अवश्य लगाएं।
- कांट-छांट के बाद बोंडो मिश्रण (नीला थोथा 2 कि.ग्रा. और अनबुझा चूना 2 कि.ग्रा. प्रति 200 लीटर पानी) का छिड़काव अवश्य करें।
- सेब के मुख्य तने पर बोर्डो पेस्ट (नीला थोथा 1 कि.ग्रा. चूना 3-5 कि.ग्रा. पानी 9 लीटर, अलसी का तेल एक लीटर) का लेप वर्ष में दो बार करें। लेप का समय मार्च व अक्टूबर/नवंबर होना चाहिए।

नेल हैंड कैंकर

इस रोग के प्रारंभिक लक्षण तनों पर कील के सिर की तरह उभरे हुए फफोलों के रूप में नजर आते हैं। इसके बाद छाल सूखकर उखड़ना शुरू कर देती है। इसके परिणामस्वरूप तनों का सूखना आरंभ हो जाता है।

विषाणु की तरह लगने वाले रोग

हमारे देश में सेब में मुख्यत: पाए जाने वाले वायरस रोगों में सेब का मोजेक या चितकारी रोग, क्लोरोटिक धब्बा रोग, स्टेम पिटिंग व स्टेम ग्रूविंग वायरस मुख्य हैं। इसके अलावा सेब में वायराइड व फाइटोप्लाज्मा, भी लगते हैं जो कि वायरस की तरह पौधों की कोशिकाओं में पनपते हैं। इस वजह से भी रोग होते हैं। इनमें मुख्यत: एप्पल स्कार स्किन वायराइड, एप्पल रबरी वुड व एप्पल प्रोलिफिरेशन रोग हैं।

सेब का मोजेक रोग

बसन्त ऋतु में संक्रमित पौधों की पत्तियों पर हल्के पीले रंग के धब्बे नजर आते हैं। पत्तों की धमनियों के साथ पीली व सफेद धारियां बन जाती हैं। कई बार रोग का अधिक प्रकोप होने के कारण पत्ते मर भी जाते हैं। इसके साथ ही साथ पत्ते असमय गिर जाते हैं और पौधे कमजोर हो जाते हैं।

क्लोरोटिक धब्बा रोग

यह मुख्यत: सेब, नाशपाती, चेरी, प्लम, खुबानी इत्यादि पौधों को संक्रमित करता है। लक्षण प्राय: पत्तियों पर आते हैं व इसकी

एप्पल प्रोलिफिरेशन

इस रोग के लक्षण पौधों पर व संक्रमण समय के आधार पर भिन्न हो सकते हैं। रोगग्रसित पौधों की कुछ शाखाएं सामान्य दिखाई देती हैं, जबकि अन्य शाखाएं लक्षण दिखा सकती हैं। रोग से संक्रमित पौधों की कुछ शाखाओं या प्रभावित शाखाओं के अंत में झाड़ू की तरह छोटी-छोटी कलियां नजर आती हैं।

संक्रमण क्षमता पौधों तथा प्रजाति पर निर्भर करती है। संक्रमित पौधों की पत्तियों पर धब्बे नजर आते हैं और पत्तियां छोटी आकार की व टेढ़ी-मेढ़ी हो जाती हैं।

स्टैम ग्रूविंग व स्टैम पिटिंग वायरस रोग

इनसे संक्रमित अधिकतर सेब की व्यावसायिक किस्मों में रोग लक्षण नजर नहीं आते हैं। वर्जीनिया क्रेब व कुछ अन्य परागण किस्मों पर रोग के लक्षण देखे जा सकते हैं। स्टैम ग्रूविंग संक्रमित वर्जीनिया क्रैब के तने पर लंबे दबे हुए निशान नजर आते हैं, जिन्हें तने की छाल को हटाकर देखा जा सकता है। कुछ पौधों के स्तम्भमूल संधिभाग पर उभरी हुई सूजन भी देखी जाती है। स्टैम पिटिंग से संक्रमित पौधों पर दबे हुए निशान तने की छाल पर देखे जा सकते हैं। कभी-कभी इससे ग्रसित वर्जीनिया क्रैब के पौधों के फल बांसुरी आकार के बन जाते हैं।

एप्पल रूबरी वुड रोग

यह रोग केवल सेब व नाशपाती की प्रजातियों तथा रूट स्टॉक में होता है। प्रभावित पौधों के तनों तथा टहनियों में अत्यधिक लचीलापन होता है। इस कारण से संक्रमित पौधा 2-3 वर्षों में भूमि की तरफ झुक जाता है। इससे मुख्य तने की वृद्धि रुक जाती है और बाकी टहनियां सतह से उभरने लग जाती हैं। रोगग्रस्त गोल्डन प्रजाति में यह मुख्य तने में सूजन कर देता है। इससे संक्रमित पौधों की उत्पादन क्षमता कम होती है तथा फलों का आकार छोटा भी रह जाता है।

कॉलर रॉट/रूट रॉट रोग

क्राउन रॉट रोग

गुच्छेदार जड़ें तथा शिखर पिट्टिका

गुच्छेदार जड़ें ज्यादातर पौधशालाओं में पाई जाती हैं। इस रोग में एक ही जगह से बहुत सारी जड़ें निकलकर झाड़ू का रूप धारण कर लेती हैं। शिखर पिट्टिका (क्राउन गॉल) पौधशालाओं व वयस्क बगीचों, दोनों में ही पाए जाते हैं। रोगी पौधों में जमीन पर अथवा जमीन के नजदीक पिट्टिका या गॉल बन जाता है। दोनों के शुरुआती लक्षण एक जैसे होते हैं। नवनिर्मित पिट्टिका अथवा गुच्छेदार जड़ें अक्सर नर्म व हल्के पीले रंग की होती हैं। ये समय के साथ धीरे-धीरे बढ़कर गुच्छों का रूप धारण कर लेती हैं तथा पिट्टिका सख्त व गहरे रंग के हो जाते हैं। इन फोड़ों/पिट्टिका का कोई नियमित आकार नहीं होता है। गुच्छेदार जड़ें व शिखर पिट्टिका रोग क्रमशः *एग्रोबैक्टिरियम राईजोजीन्ज* तथा *एग्रोबैक्टिरियम रेडियोबैक्टर* पीवी *ट्यूमिफेशिएन्श* नामक बैक्टीरिया के कारण होते हैं।

वायरस रोगों की रोकथाम

वायरस व इस तरह का जीवाणु पौधों की कोशिकाओं में रहता है। इसका सेब में फैलाव मुख्य रूप से केवल रोगग्रस्त पौधों से ली गई कलमों के प्रयोग करने से होता है। सेब की पौध तैयार करने में मूलवृंतों का प्रयोग भी होता है। अगर मूलवृंत वायरस रोग से ग्रसित होता है तो जितने भी मूलवृंत पौधे उससे तैयार किए जाएंगे वे भी वायरस से संक्रमित होंगे। जब स्वस्थ मूलवृंत पर वायरस संक्रमित कलम ग्राफ्ट की जाती है तो इससे तैयार पौध भी वायरस रोग से ग्रसित होगी। इस तरह से पौधे जब दूरदराज के क्षेत्रों में ले जाए जाते हैं तो ये रोग के फैलाव का कारण बन जाते हैं। इसलिए रोग के फैलाव का मुख्य कारण संक्रमित मूलवृंत, कलमें व पौधे होते हैं। वायरस व इस प्रकार के विषाणुओं से होने वाले रोगों की रोकथाम के लिए वायरसरहित कलमें, मूलवृंत व पौधे प्रयोग में लाए जाने चाहिए। रोगमुक्त पौधे इंडेक्सिंग या थर्मोथिरेपी द्वारा भी प्राप्त किए जा सकते हैं।

कॉलर रॉट/रूट रॉट अथवा क्राउन रॉट

यह रोग फाइटोफ्थोरा कैक्टोरम नामक फफूंद के कारण होता है। इसका संक्रमण कॉलर क्षेत्र यानी मृदा के साथ लगते भाग से शुरू होता है। यह फफूंद मुख्यतः कैम्बियम पर संक्रमण करती है तथा इसके संक्रमण के लिए घाव आवश्यक होता है। इस रोग से संक्रमित पौधों की मृदा से लगती छाल सड़कर गहरे भूरे रंग की व स्पंजी हो जाती है। संक्रमण क्षेत्र में कैंकर जैसे अनियमित रूपरेखा वाले घाव बनते हैं और तेजी से विस्तार कर पेड़ के तने को चारों ओर से घेर लेते हैं। इस रोग

एप्पल स्कार स्किन वायराइड

इस रोग के लक्षण फलों पर ही दिखाई देते हैं। ये लक्षण मध्य जुलाई में फल पर रंग आने पर दिखाई देने लगते हैं। संक्रमित पौधों के फलों पर छोटे गोलाकार धब्बे नजर आते हैं तथा कुछ पौधों के फलों पर स्टैम एंड पर भूरे रंग की उभरी हुए रस्सैटिंग की तरह लक्षण नजर आते हैं और दरारें आ जाती हैं। प्रभावित फलों की वृद्धि बहुत धीरे होती है तथा गुणवत्ता में भी कमी आती है।

बीजू पौध झुलसा

के कारण संक्रमित पौधों में पोषक तत्वों को अवशोषित करने की क्षमता कम हो जाती है। इसकी वजह से संक्रमित वृक्षों को पत्तियों की बैंगनी रंग की नसों, बीमों की सामान्य से अधिक संख्या, विरले व छोटे पत्तों, आकार में छोटे फलों, पत्तों का देरी से निकलना इत्यादि लक्षणों द्वारा आसानी से पहचाना जा सकता है।

सीडलिंग ब्लाइट/बीजू पौध झुलसा

यह रोग अधिकतर पौधशालाओं अथवा नए पौधों में देखने को मिलता है। गर्म जगहों, जहां मृदा का तापमान 30^0-33^0 सेल्सियस, पी-एच 6.0 तथा मृदा की नमी 38 प्रतिशत से अधिक हो, यह रोग आसानी से पनप सकता है। यह रोग सक्लैरोशियम रोल्फसाई नामक फफूंद की वजह से होता है। यह जड़ों में संक्रमण करती है, जिससे पौधों के पत्ते मुरझाने लगते हैं व लालिमा अथवा भूरे रंग के हो जाते हैं। अंततः इस रोग से ग्रसित बीजू पौधों के पत्ते पूर्णतया मुरझा जाते हैं। मृत पौधों के बगल में सरसों के दाने के आकार के स्कलोरेशिया नजर आते हैं। इनसे यह रोग आसानी से पहचाना जा सकता है।

मृदाजनित रोगों का प्रबंधन

मृदाजनित रोगों का प्रबंधन मुख्य इसी बात पर निर्भर करता है कि रोग के कारकों को कैसे एक्टिव स्टेट से दूर रखा जाए या कम से कम किया जाए। मृदाजनित रोगों के प्रबंधन के सभी सिद्धांत प्रयोग में लाए जाने चाहिए, जिन्हें हम निम्न प्रकार से समझ सकते हैं:

साफ-सफाई

मृदा द्वारा फैलने वाले रोगों में साफ-सफाई का महत्व इसलिए भी बढ़ जाता है, क्योंकि मृदा में प्राथमिक इनोकुलम यदि इकोनोमिक थ्रेशहोल्ड से बढ़ जाए तो रोग आने की आशंका बढ़ जाती है। रोग वाले मृत पौधों या अवशेषों को खेत से निकालकर नष्ट कर देना चाहिए, जिससे प्राथमिक इनोकुलम कम हो सके। जब पेड़ सुषुप्तावस्था (नवंबर-दिसंबर) में हो तो प्रभावित जड़ों की मृदा हटाकर रोगग्रस्त जड़ों को काटकर निकाल दें और कटे स्थान पर चौबटिया पेस्ट (एक-एक भाग कॉपर कार्बोनेट और लाल सिंदूर व सवा भाग अलसी का तेल) का लेप लगाएं।

जैविक नियंत्रकों का उपयोग

मृदाजनित रोगों के प्रबंधन के लिए प्रारंभिक अनुसंधानों में जैविक नियंत्रक काफी महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इनमें *ट्राइकोडर्मा विरिडी, ट्राइकोडर्मा हारजियानम, एंजेटोबैक्टर एरोजीन्ज, स्यूडोमोनास फ्लोरिसैन्स* इत्यादि जैविक नियंत्रक विभिन्न तरीकों से इन रोगों के नियंत्रण में सहायता प्रदान करते हैं। इन जैविक नियंत्रकों की उपस्थिति के कारण रोगाणु अपना विस्तार नहीं कर पाते हैं और रोग एक सीमा से नीचे रहते हैं।

सफेद जड़ विगलन

यह रोग नर्सरी पौधों से लेकर किसी भी अवस्था के पौधों में पाया जाता है। सफेद जड़ विगलन जैसा कि नाम से ही स्पष्ट है, वर्षा ऋतु में जमीन की सतह पर पोषण ग्रहण करने वाली जड़ों में सफेद रुई के जैसे कवक जाल के रूप में देखा जा सकता है। सेब का यह रोग *डिमैटोफोरा निकाट्रिक्स* नामक फफूंद के कारण होता है। यह 173 से अधिक पौधों की प्रजातियों को संक्रमित कर सकता है। अनुकूल परिस्थितियों में यह फफूंद बहुत तेजी से फैलती है, जिससे पोषण ग्रहण करने वाली जड़ें सड़ जाती हैं, अंततः संक्रमित पेड़ मर जाता है। यह फफूंद मृदा में मृत जड़ों अथवा जीवांशों पर जीवित रहकर धीरे-धीरे साथ लगते अन्य वृक्षों में भी फैल जाती है। यदि इस रोग से प्रभावित वृक्षों को समय पर उपचारित न किया जाये तो यह रोग पूरे बगीचे को संक्रमित कर खत्म कर सकता है। जहां पर मृदा का पी-एच मान 6.1 से 6.5 के बीच होता है व तापमान 15^0-25^0 सेल्सियस हो, वहीं पर यह रोग अपना ज्यादा प्रभाव दिखाता है।

रासायनिक नियंत्रक

किसी भी रोग के एक सीमा से अधिक फैलने पर उन्हें कृषि रसायनों द्वारा ही नियंत्रित किया जा सकता है।

- **कॉलर/रूट/क्राउन रस्टः** पेड़ के तने के चारों ओर 30 सें.मी. के दायरे में मैंकोजेब (600 से 800 ग्राम/200 लीटर पानी) या कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (1000 ग्राम/200 लीटर पानी) या मैटालैक्सिल + मैंकोजेब (600 ग्राम/200 लीटर पानी) या बोर्डो मिक्स्चर (2 कि.ग्रा. नीलाथोथा + 2 कि.ग्रा. बुझा हुआ चूना/200 लीटर पानी) के 10 लीटर घोल से सिंचाई करें। यह प्रक्रिया वर्ष में दो बार मार्च व मानसून में अपनाएं।
- **श्वेत जड़ विगलनः** रोग से ग्रसित पौधों को बरसात के दिनों में तीन बार 15-20 दिनों के अंतराल पर कार्बेन्डाजिम (200 ग्राम/200 लीटर पानी) या ऑरियाफंजिन (100 ग्राम) + कॉपर सल्फेट (100 ग्राम)/200 लीटर पानी के 10-15 लीटर घोल से उपचारित करें।
- **सीडलिंग ब्लाइट/बीजू झुलसाः** नर्सरी में ग्रसित पौधों की थीरम (600 ग्राम) या ऑरियोफंजिन (80 ग्राम)/200 लीटर पानी के घोल से सिंचाई करें।
- **गुच्छेदार जड़ें/शिखर पिट्टिकाः** पौधे लगाने से पहले एक घंटे तक स्वस्थ कलम किए हुए पौधों को एक प्रतिशत कॉपर सल्फेट मिश्रण (10 ग्राम/लीटर पानी) में डुबोकर रखें, फिर छाया में सुखाकर नर्सरी में लगाएं।

मखाना से लाभकारी प्रसंस्करित उत्पाद

बी.आर. जाना* और **मुहम्मद इदरीस***

पॉपस मखाना (लावा) बिहार के मिथिलांचल में प्रसिद्ध उत्पाद है। प्राचीनकाल से मिथिला क्षेत्र के लोग मखानों का इस्तेमाल विभिन्न घरेलू उत्पादों जैसे पॉप मखाना, हलवा और खीर के लिए करते रहे हैं। कश्मीर और असोम में इसके बीज सब्जी के रूप में खाये जाते हैं। कच्चे या भुने हुए बीजों के साथ-साथ सूखे बीज के आटे का उपयोग पौष्टिक रोटी बनाने में किया जाता है। इसका उपयोग मिठाई आदि बनाने में भी होता है। प्रस्तुत आलेख का उद्देश्य मखाना उत्पादों के बारे में जागरूक करना तथा इन्हें तैयार करने की वैज्ञानिक विधियों के बारे में बताना है।

मखाना देश में उत्पादित सबसे महत्वपूर्ण जलीय फसलों में से एक है। यह उच्च प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट के लिए जाना जाता है। मखाना 3000 वर्ष पहले से प्राचीन भारत और चीन में उपयोग में आने वाला शानदार औषधीय पौधा है। इसका बीज आयुर्वेदिक दवाइयों में उपयोग किया जाता है। यह हृदय को मजबूत करता है और एनीमिया में बहुत उपयोगी है। मखाना का उपयोग तिल्ली और गुर्दे को मजबूत करने के लिए किया जाता है। इसमें कम सोडियम और अधिकतम पोटेशियम पाया जाता है। यह रक्तचाप को कम करता है। इसमें मोनो संतृप्त वसा की बहुत कम मात्रा होती है। यह रक्त में शर्करा के स्तर को बढ़ाने से रोकती है। इसके अलावा बी.पी. और ब्लड शुगर, क्रोनिक डायरिया और गठिया जैसे रोगों को नियंत्रित करने में भी मदद करता है। मखाना के बीज कैल्शियम और कई सूक्ष्म पोषक तत्वों के समृद्ध स्रोत हैं। यह पौष्टिक है और आसानी से पच जाता है। कच्चे बीज में एंटीऑक्सीडेंट की मात्रा अधिक होती है, जो उच्च तापमान में प्रसंस्करण के कारण होती है। मखाने में अद्वितीय ग्लाइकोसाइड संयोजन होते हैं और ये हृदय रोगों के लिए अनुकूल हैं। इससे तैयार मिठाई जैसे-मखाना बर्फी, कलाकंद और मखाना चपाती (1:1) में उच्च कैलोरी और कम चीनी होती है। यह केवल पौष्टिक ही नहीं, बल्कि स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद भोजन भी है।

सारणी-1 के अनुसार मखाना कलाकंद में प्रोटीन की मात्रा अत्यधिक (11.53 प्रतिशत) और मखाना चपाती में कम (10.57 प्रतिशत) होती है। मखाने और गेहूं की चपाती में कार्बोहाइड्रेट की प्रचुरता (64.04 प्रतिशत) पाई जाती है। मखाना

मखाना

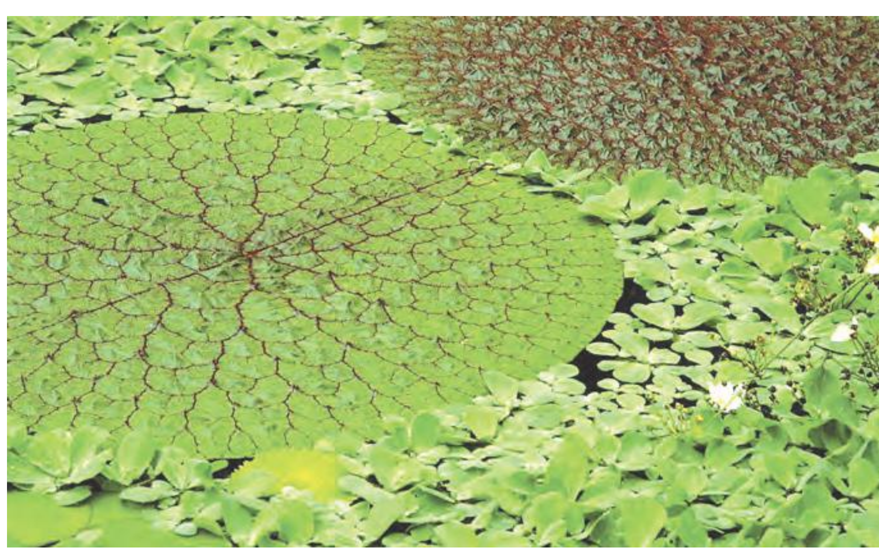

मखाना उत्पादन

*भाकृअनुप-मखाना अनुसंधान केन्द्र, दरभंगा (बिहार)

मखाने के विभिन्न उत्पाद

मखाना बीज और कर्नेल चूर्ण पाउडर

मखाना बीज को 48 घंटों के लिए 30 से 35^0 सेल्सियस पर सुखाएं। बीज खोल को हटाने के लिए कम तापमान और लंबी अवधि तक सुखाना बहुत प्रभावी है। फिर गुठली आसानी से भूसी से अलग-थलग हो जाती है, जैसे कि बादाम और अखरोट। खोल से अलग होने के बाद गुठली की अच्छी तरह पिसाई करते हैं। इसके पौष्टिक तत्व बने रहें इसलिए इसे छाया में सुखाया जाता है। इसका आटा एंटीऑक्सीडेन्ट, विटामिन, प्रोटीन तत्वों से भरपूर होता है, जो मानव स्वास्थ्य के लिए बहुत फायदेमंद है। मखाने व गेहूं के आटे (1:1) को मिलाकर चपाती बनाने के लिए प्रयोग किया जाता है। मखाने की बर्फी तैयार करने के लिए मखाना पाउडर और दूध के साथ तथा मखाना कलाकंद को दूध और छेना के साथ मखाना पाउडर मिश्रण से तैयार किया जाता है। मखाने को बेसन पाउडर, कटी हुई गोभी और सोयाबीन तेल के साथ मिलाकर पकौड़ा बनाया जाता है। मिठाई के मिश्रण हेतु 20 से 30 मिनट के लिए 140-150 डिग्री सेल्सियस पर अधिक सांन्द्रता तक उबालते हैं। चपाती और पकौड़ा बनाने के लिए तापमान 130-140 डिग्री सेल्सियस रहना चाहिए।

सारणी 1. मखाना उत्पादों में विभिन्न पोषक तत्व और उनसे उत्पादित ऊर्जा

उत्पाद	प्रोटीन (प्रतिशत)	कार्बोहाइड्रेट (प्रतिशत)	वसीय अम्ल (प्रतिशत)	कुल घुलनशील शर्करा (प्रतिशत)	कैलोरी/100 ग्राम उत्पाद
मखाना बर्फी	5.40	25.47	4.37	19.33	160.33
मखाना कलाकंद	11.53	21.53	8.73	16.66	232.83
मखाना चपाती	10.57	64.04	2.49	0.24	317.24
मखाना पकौड़ा	8.85	30.19	12.71	2.82	211.46

मखाना कलाकन्द और मखाना चपाती

मखाना को बनाएं आमदनी का जरिया

मखाना की फसल तालाब में

और पत्तागोभी के बने पकौड़े स्वादिष्ट होने के साथ-साथ इनमें वसा की मात्रा अधिक (12.71 प्रतिशत) पाई जाती है। मखाने व गेहूं से बनी चपाती में कुल घुलित शर्करा कम मात्रा (0.24 प्रतिशत) में पाई जाती है। जहां तक ऊर्जा का संबंध है, मखाना चपाती में अत्यधिक कैलोरी (317.24/100 ग्राम) उपलब्ध होती है। मखाना कलाकंद में 232.83 कैलोरी/100 ग्राम उपलब्ध होती है।

मखाना, मानव स्वास्थ्य के लिए प्रकृति का एक अनमोल वरदान है, जो केवल हमारी खाद्य समस्या को ही हल नहीं करता है वरन यह पूर्णत: स्वास्थ्यवर्धक भी है। इसके सेवन से स्वास्थ्य पर बेहद अनुकूल प्रभाव पड़ता है। आजकल के खाद्य पदार्थों को देखते हुए मखाना के उत्पाद बहुत लाभकारी हैं। इसका उपयोग बहुत सी आयुर्वेदिक दवाइयों को बनाने में किया जाता है। इसलिए इसे 'देवों का भोजन' भी कहा जाता है। इसका प्राचीन काल से ही व्रत के समय सेवन लाभकारी माना जाता रहा है। ■

मटकों में ढींगरी मशरूम का उत्पादन

पवन कुमार पंवार*, **एस.के. बैरवा*** और **सुरेन्द्र सिंह***

राजस्थान में मुख्यत: तीन प्रकार के मशरूम की खेती की जाती है। इसमें बटन मशरूम, ढींगरी मशरूम और मिल्की मशरूम शामिल हैं। प्रदेश की जलवायु भिन्न प्रकार की है तथा ऋतुओं के अनुसार वातावरण में तापमान तथा नमी भी अलग-अलग रहती है। इसको ध्यान में रखकर समय-समय पर विभिन्न प्रकार के मशरूमों की खेती की जा सकती है। हमारे देश और कई राज्यों की जलवायु ढींगरी मशरूम के लिए बहुत ही अनुकूल है तथा वर्षभर ढींगरी मशरूम की विभिन्न प्रजातियों की खेती की जा सकती है। ढींगरी या ऑयस्टर मशरूम (प्लूरोटस) सर्वाधिक लोकप्रिय शीतोष्ण एवं उपोष्ण प्रजाति है और विश्व मशरूम उत्पादन में इसका बटन मशरूम व शिटाके मशरूम के बाद तृतीय स्थान है।

ढींगरी मशरूम की लगभग 32 प्रजातियां सारे विश्व में पाई जाती हैं। इसमें से लगभग सोलह प्रजातियों का व्यावसायिक तौर पर उत्पादन किया जाता है। इनमें शामिल हैं: *प्लूरोटस सेपीडस, प्लूरोटस फ्लोरिडा, प्लूरोटस सजोर-काजू, प्लूरोटस फ्लेबीलेटस, प्लूरोटस ऑस्ट्रीएटस, प्लूरोटस एरीन्जाई, प्लूरोटस सिट्रीनोपिलीयेटस, प्लूरोटस कार्नुकोपीया, प्लूरोटस मेम्ब्रेनीयस, प्लूरोटस सिस्टीडीयोसस, प्लूरोटस फोसुलेटस, प्लूरोटस ओपन्शीयाई, प्लूरोटस ट्यूबररेजीयम* इत्यादि। ढींगरी की विभिन्न प्रजातियों की विशेषता यह है कि ये देखने में अलग-अलग हैं। इनका स्वाद तथा इन्हें उगाने के लिए तापमान भी भिन्न रखना होता है। कुछ समय पहले तक इसकी कुछ ही प्रजातियों का उत्पादन मुख्यत: सिर्फ गर्मियों में अप्रैल से सितंबर तक किया जाता था। अध्ययन करने पर पाया गया कि कुछ अन्य प्रजातियां गर्मियों के लिए उपयुक्त हैं तथा कुछ प्रजातियां सर्दियों में उगाने के लिए खासतौर पर जब तापमान 14^0-20^0 सेल्सियस तक होता है तथा उनका उत्पादन अच्छा होता है। सर्दियों में उगाये जाने वाली किस्में *प्लूरोट्स ऑस्ट्रीएट्स, प्लूरोटस फ्लोरिडा, प्लूरोटस एरीन्जाई* तथा *प्लूरोटस फोसुलेट्स* हैं। अन्य सभी किस्में गर्मियों में उगाने के लिए उपयुक्त हैं। इस तरह तापमान के अनुसार ढींगरी की प्रजातियों का चयन कर वर्षभर पैदावार ली जा सकती है।

मटकों से मशरूम फलन की प्राप्ति

राजस्थान में ढींगरी मशरूम का प्रचलन बहुत कम है, लेकिन इसकी प्रजाति *प्लूरोटस फ्लोरिडा* के सफेद दूधिया रंग के कारण इसकी मांग बढ़ने लगी है। इस प्रजाति के लिए आवश्यक तापमान (18^0-22^0 सेल्सियस) व आर्द्रता (80-85 प्रतिशत) पूरे वर्ष नहीं रहने के कारण इसे बिना नियंत्रित कक्ष के (जिनमें तापमान और आर्द्रता को नियंत्रित किया जा सके) पूरे वर्ष उगाना मुश्किल होता है। हम इस प्रजाति का उत्पादन यदि मटकों में करें तो गर्मी के दिनों में भी इस प्रजाति को उगाने में सफलता प्राप्त कर अच्छा उत्पादन ले सकते हैं। मटकों और उसके आसपास का तापमान बाहर के तापमान से 10^0 से 12^0 सेल्सियस तक कम होता है तथा आर्द्रता भी पर्याप्त मात्रा में रहती है।

राजस्थान में विभिन्न त्यौहारों जैसे-आक्खातीज, बासोड़ा, निर्जला ग्यारस, गोगा नवीं आदि पर घरों में नये मटके रखने की प्रथा है तथा गर्मियों में भी पुराने मटके हटाकर नये मटके रखे जाते हैं। इससे पुराने मटके यों ही व्यर्थ हो जाते हैं। हम उन

*भाकृअनुप-पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि अनुसंधान केंद्र, श्रीगंगानगर, स्वामी केशवानन्द कृषि विश्वविद्यालय, बीकानेर (राजस्थान)

मटकों का उपयोग मशरूम उगाने में कर सकते हैं। इस नई तकनीक द्वारा मटकों में ढींगरी मशरूम उगाने की विधि का विवरण आगे दिया गया है:

तैयारी

ढींगरी का उत्पादन करने के लिए खेत खलिहानों से प्राप्त कृषि अवशेषों का प्रयोग किया जा सकता है। कृषि अवशेष सूखा हो और उसमें किसी भी तरह की फफूंद का प्रकोप नहीं होना चाहिए।

बीजाई के लिए मटके तैयार करना

सर्वप्रथम पुराने मटकों को 4 प्रतिशत फार्मेलीन के घोल से उपचारित कर पॉलीथीन शीट से 24 घंटे तक के लिए ढक दिया जाता है। 24 घंटे बाद पॉलीथीन शीट हटाकर मटकों को हवा में 12 घंटे के लिए रखा जाता है ताकि उनमें से फार्मेलीन की गंध निकल जाये। अगले दिन इन उपचारित मटकों में ड्रिल मशीन की सहायता से 10 से 12

माध्यम या पोषाधार तैयार करना

बीजाई कर पोषाधार मटकों में भरना

मटकों में मशरूम उत्पादन तथा रखरखाव

बीजाई के लिए मटके तैयार करना

फलन के लिए मटकों के छिद्रों में से रुई व मुंह पर लगी पॉलीथीन हटा दी जाती है। दिन में दो से तीन बार मटकों, फर्श व दीवारों पर पानी का छिड़काव किया जाता है, ताकि आवश्यक आर्द्रता (80-85 प्रतिशत) बनी रहे। कवक जाल फैलने के 7 से 10 दिनों बाद मटकों पर किए गए छोटे-छोटे छेदों में से मशरूम कलिकायें निकलनी शुरू हो जाती हैं। ढींगरी मशरूम की कलिकायें बनने व उनके विकास के लिए प्रकाश की आवश्यकता होती है। प्रतिदिन 4 से 5 घंटे ट्यूब लाइट अथवा बल्ब का प्रकाश देना चाहिए। कमरे में आर्द्रता भी लगभग 75-80 प्रतिशत होनी चाहिए। पानी छिड़कते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यदि मशरूम तोड़ने लायक हो रही हो तो छत्रक पर पानी का जमाव नहीं रहे। पानी का छिड़काव हमेशा मशरूम तोड़ने के बाद करना चाहिए। कमरे की खिड़कियां तथा दरवाजे प्रतिदिन दो घंटे खुले रखने चाहिये, जिससे कार्बनडाईऑक्साइड बाहर निकल जाये तथा ऑक्सीजन की उचित मात्रा कमरे में विद्यमान रहे। ढींगरी मशरूम का छत्रक अगर छोटा तथा डंठल बड़ा हो तो समझ लेना चाहिए कि ऑक्सीजन पर्याप्त नहीं है। ऐसे समय में खिड़कियों को ज्यादा देर तक खुला रखना चाहिए। उत्पादन कक्ष में एग्जॉस्ट फैन लगाकर भी कार्बनडाईऑक्साइड की मात्रा कम की जा सकती है। मशरूम कलिकायें दो से तीन दिनों में बढ़कर परिपक्व हो जाती हैं। जब ढींगरी मशरूम के छत्रक का बाहरी किनारा अंदर की तरफ मुड़ने लगे तो समझ लेना चाहिए कि फसल तोड़ने लायक हो गयी है। पूर्ण विकसित मशरूम को हाथ से मरोड़कर तोड़ लेना चाहिए।

सारणी 1. ढींगरी मशरूम की विभिन्न प्रजातियां, उगाने का तापमान, बीज फैलने का समय, पैदावार में लगा समय एवं पैदावार

ढींगरी की प्रजातियां	उगाने का तापमान (सेल्सियस)	बीज फैलने का समय (दिन)	पैदावार के लिये समय (दिन)	पैदावार ग्राम/कि.ग्रा. शुष्क माध्यम
प्लूराटेस फ्लेबीलेटस	22-26^0	12-14	18-22	600-900
प्लूरोटस सजोर-काजू	22-26^0	12-14	18-25	500-700
प्लूरोटस सेपीडस	22-26^0	16-18	22-28	400-750
प्लूरोटस ईयोस	22-26^0	16-18	25-30	300-500
प्लूराटेस ऑस्ट्रीएटस	12-22^0	20-25	30-35	300-500
प्लूरोटस फ्लोरिडा	18-22^0	16-18	25-30	300-500

स्रोत: भाकृअनुप-खुम्ब अनुसंधान निदेशालय, चम्बाघाट, सोलन

मटके में कवकजाल का फैलाव

सें.मी. की दूरी पर 5-7 मि.मी. व्यास के 15 से 20 छिद्र किए जाते हैं। मटकों को माध्यम या पोषाधार तैयार करने से पहले तैयार कर लेना चाहिए।

बीजाई

प्लूरोटस फ्लोरिडा का ताजा स्पॉन जो कि 30 दिनों से ज्यादा पुराना नहीं हो, काम में लेना चाहिए। बीज की मात्रा 250 से 300 ग्राम प्रति 10 से 12 कि.ग्रा. गीले भूसे की दर से प्रयोग की जानी चाहिए। गीला भूसा और बीज को एक प्लास्टिक के टब में अच्छी तरह से मिलाकर तैयार किए गए मटकों में ऊपर तक भर दिया जाता है। इसके बाद मटके के मुंह को पॉलीथीन से बंद कर दिया जाता है। मटकों में किए गए छिद्रों को नमी न सोखने वाली रुई से बंद किया जाता है।

कवक जाल का फैलाव व प्रबंधन

स्पॉनिंग के पश्चात इन मटकों को उत्पादन कक्ष में रख दिया जाता है। मटकों को रखने के लिए लोहे या बांस के फ्रेम या सीढ़ीनुमा रैकों अथवा लटकाने के लिए रस्सी का उपयोग किया जा सकता है। उत्पादन कक्ष, जिसका आकार 15' लंबाई ×10' चौड़ाई × 10' ऊंचाई हो, में लगभग 100 से 125 मटके रखे जा सकते हैं। उत्पादन कक्ष में दो खिड़कियां होनी चाहिए। शीघ्र ही बीजों से छोटे-छोटे सफेद तन्तुओं का एक जाल फैलने लगता है। सफेद तन्तुओं का जाल कवक जाल कहलाता है। कवक जाल फैलते समय कमरे में प्रकाश एवं ऑक्सीजन की जरूरत नहीं होती। केवल दिन में दो से तीन बार मटकों पर पानी छिड़कने की जरूरत होती है, जिससे उसके आसपास का वातावरण ठंडा रहे। कमरे का तापमान 28^0 सेल्सियस से बढ़ने लगे तो फर्श तथा दीवारों पर पानी का छिड़काव करने से तापमान कम हो जाता है। एयर कूलर की सहायता से भी कमरे को ठंडा रखा जा सकता है। लगभग 15 से 20 दिनों में सफेद कवक जाल पूरे भूसे पर फैल जाता है। ■

उपज

ढींगरी की पैदावार 35 से 40 दिनों तक आती रहती है तथा एक कि.ग्रा. सूखे भूसे से लगभग 500 से 900 ग्राम तक मशरूम प्राप्त हो सकती है। पहली फसल के कुछ दिन (लगभग 10-15 दिनों) बाद दूसरी फसल आती है। पैदावार भूसे की गुणवत्ता तथा ढींगरी की प्रजाति पर निर्भर करती है। तुड़ाई के बाद डंठल के साथ लगी घास को काटकर हटा दिया जाता है तथा दो घंटे बाद छिद्रित पॉलीथीन में पैक कर बाजार में भेजना चाहिए। इस मशरूम को सुखाया भी जा सकता है। उसके लिए इसे साफ मलमल के कपड़े पर धूप में या हवादार कमरे में दो से तीन दिनों तक रखना चाहिए। सूखी ढींगरी को अच्छी तरह से सीलबन्द करके उपयोग में लाने से पहले गर्म पानी में 10 मिनट तक भिगो देना चाहिए। उसके बाद उसकी सब्जी अथवा सूप बनाना चाहिए। ढींगरी के बीजाणु (स्पोर्स) से एलर्जी होती है। उत्पादन कक्ष में जाने से पहले नाक व मुंह पर पतला कपड़ा बांधकर खिड़कियां तथा दरवाजे खोलने के दो घंटे बाद कमरे में प्रवेश करना चाहिए।

मशरूम कलिकाओं का निकलना

माध्यम या पोषाधार तैयार करना

गेहूं का भूसा तथा धान की पराली सबसे ज्यादा प्रचलित माध्यम है। ढींगरी मशरूम उगाने के लिए इसे उपचारित कर उपयुक्त बनाना पड़ता है। इसमें मौजूद हानिकारक सूक्ष्मजीवों को नष्ट कर देना चाहिए। भूसे के उपचार की सबसे सरल एवं प्रचलित विधि रासायनिक उपचार विधि है। इस विधि के अनुसार, कुछ विशेष प्रकार के फफूंदनाशी रसायनों से भूसे को जीवाणुरहित किया जाता है। इसके लिए एक 200 लीटर ड्रम या प्लास्टिक टब में लगभग 12 से 15 कि.ग्रा. भूसा या पुआल की कुट्टी को 90 लीटर पानी में भिगो दिया जाता है। एक प्लास्टिक की बाल्टी में 10 लीटर पानी में 7.5 ग्राम बाविस्टीन तथा 125 मि.ली. (लगभग एक चाय का छोटा कप) फार्मेलीन मिला दिया जाता है। मिलाने के बाद इसे अच्छी तरह से हिलाया जाता है, ताकि यह रसायन पेन्दे में बैठ नहीं जाये। अब इस घोल को ड्रम में गीले भूसे के ऊपर चारों तरफ डालकर प्लास्टिक शीट से ढक दिया जाता है। लगभग 16-18 घंटे बाद भूसे को इस रासायनिक घोल से निकाल कर पॉलीथीन शीट या पक्के फर्श पर फैला दिया जाता है,जिससे कि फार्मेलीन की महक उड़ जाये और भूसे से पानी निचुड़ जाये तथा भूसे में 65 प्रतिशत नमी रह जाए।

पालक से कमाई

संगीत कुमार*, **एस.के. धनखड़*** और **निधि सहगल***

भारतीय व्यंजनों में हरी सब्जियां अपना एक अलग ही महत्व रखती हैं। पालक (बीटा वल्गेरिस वर्गा बेंगालेंसिस) का भी अपना एक विशेष स्थान है। इसे उष्णकटिबंधीय और उपोष्णकटिबंधीय क्षेत्रों में उगाया जाता है। पालक की मुख्य रूप से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, राजस्थान, पंजाब और हरियाणा में खेती की जाती है। यह फसल अब कर्नाटक जैसे दक्षिण भारतीय राज्य में भी लोकप्रियता हासिल कर रही है। पालक एक ऐसी सब्जी है, जो कि आयरन एवं एंटीऑक्सीडेंट से भरपूर होती है। यह फसल कम समय और कम लागत में अच्छा मुनाफा देती है।

पालक की एक बार बुआई करने के बाद उसकी 5-6 बार कटाई की जाती है। इसकी फसल पूरे वर्ष ली जाती है। अलग-अलग महीनों में इसकी बुआई करनी पड़ती है। पालक में प्रयुक्त विभिन्न उत्पादन और विपणन तकनीकों को अपनाने से किसान अपनी आय बढ़ाने में सफल हो सकते हैं।

खेत की तैयारी

पालक की बुआई से पहले खेत की अच्छी तरह से जुताई करके मिट्टी को भुरभुरी बना लेना चाहिए। इसके लिए हैरो या कल्टीवेटर से 2-3 बार जुताई की जानी चाहिए। जुताई के समय ही खेत से खरपतवार निकाल देने चाहिए। अच्छी उपज के लिए खेत में पाटा लगाने से पहले 25 से 30 टन गोबर की सड़ी खाद व एक क्विंटल नीम की खली या नीम की पत्तियों से तैयार की गई खाद को प्रति हैक्टर की दर से खेत में बिखेर देना चाहिए। बुआई के लिए पालक की उन्नत प्रजातियों का चुनाव करें।

बुआई का समय

वैसे तो पालक की बुआई पूरे वर्ष की जा सकती है, लेकिन फरवरी से मार्च व नवंबर से दिसंबर के दौरान बुआई करना ज्यादा फायदेमंद रहता है।

बीज की मात्रा व बुआई

पालक की उन्नत प्रजातियों के 25-30 कि.ग्रा. बीज एक हैक्टर खेत के लिए उपयुक्त रहते हैं। बुआई से पहले बीजों को 5-6 घंटे तक पानी में भिगोकर रखने से बीजों का जमाव बेहतर होता है। बुआई के समय खेत में उचित मात्रा में नमी होनी चाहिए।

खाद व उर्वरक

पालक की खेती के लिए गोबर की सड़ी खाद व वर्मीकम्पोस्ट का इस्तेमाल सही होता है। इससे मृदा को सही पोषक तत्व मिलते हैं और पालक की फसल भी अच्छी होती है। बुआई के समय 20 कि.ग्रा. नाइट्रोजन, 50 कि.ग्रा. फॉस्फोरस व 60 कि.ग्रा. पोटाश प्रति हैक्टर की दर से खेत में डालने से पैदावार बढ़ती है। इसके अलावा हर कटाई के बाद 20 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर की दर से नाइट्रोजन का बुरकाव खेत में करते रहना चाहिए। इससे उत्पादन में अच्छी वृद्धि होगी।

खरपतवार व कीट नियंत्रण

पालक में वैसे तो कीटों का प्रकोप कम

पोषण से समृद्ध है पालक

*सब्जी विज्ञान विभाग, सीसीएस हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार-125 004

पालक की पैदावार

होता है, लेकिन खरपतवार होने की आशंका अधिक बनी रहती है। पालक की फसल में किसी तरह के रासायनिक कीटनाशकों के इस्तेमाल से बचना चाहिए। अगर फसल में खरपतवार उग आएं तो उन्हें जड़ से उखाड़ देना चाहिए। इस फसल में पत्ती खाने वाले कीट का प्रकोप देखा जाता है। कैटरपिलर नाम का यह कीट पहले पत्तियों को खाता है और बाद में तने को नष्ट कर देता है। इस कीट से निजात पाने के लिए जैविक कीटनाशकों का प्रयोग किया जा सकता है। जैविक कीटनाशक के रूप में किसान नीम की पत्तियां का घोल बनाकर 15-20 दिनों के अंतर पर छिड़काव कर सकते हैं। इसके अलावा 20 लीटर गौमूत्र में 3 कि.ग्रा. नीम की पत्तियां व आधा कि.ग्रा. तंबाकू घोलकर फसल में छिड़काव कर कीट नियंत्रण किया जा सकता है।

पैदावार व लाभ

पालक की बुआई के एक महीने बाद जब पत्तियों की लंबाई 15-30 सें.मी. के लगभग हो जाए तो पहली कटाई कर देनी चाहिए। यह ध्यान रखें कि पौधों की जड़ों से 5-6 सें.मी. ऊपर से ही पत्तियों की कटाई की जानी चाहिए। हर कटाई में 15-20 दिनों का अंतराल जरूर रखना चाहिए। प्रत्येक कटाई के बाद फसल की सिंचाई करें। इससे फसल तेजी से बढ़ती है।

जहां तक उत्पादन और आय का सवाल है तो एक हैक्टर फसल से 150-250 क्विंटल तक की औसत उपज हासिल की जा सकती है, जो बाजार में 15-20 रुपए प्रति कि.ग्रा. की दर से आसानी से बेची जा सकती है। इस प्रकार अगर प्रति हैक्टर लागत के 25 हजार रुपए निकाल दिए जाएं तो 1500 रुपए प्रति क्विंटल की दर से 200 क्विंटल से 3 महीने में ही 2 लाख, 75 हजार रुपए की आय आसानी से हो जाती है।

आयरन का स्रोत-पालक

उन्नत किस्में

पालक की खेती से अधिकतम उत्पादन के लिए अपने क्षेत्र एवं जलवायु के आधार पर किस्मों का चयन करना चाहिए। पालक की कुछ प्रचलित किस्में इस प्रकार हैं:

पूसा पालक

इस किस्म को स्विसचार्ड से संकरित कर विकसित किया गया है। इसमें एक समान हरे पत्ते आते हैं। इसमें जल्दी से फूल वाले डंठल बनने की समस्या नहीं आती है।

पूसा हरित

इस किस्म को पहाड़ी इलाकों में पूरे वर्ष उगाया जा सकता है। इसके पौधे ऊपर की तरफ बढ़ने वाले, ओजस्वी, गहरे हरे रंग के और बड़े आकार की पत्ती वाले होते हैं। इसकी कई बार कटाई की जा सकती है। इसमें बीज बनाने वाले डंठल देर से निकलते हैं। इस किस्म को विभिन्न प्रकार की जलवायु एवं क्षारीय भूमि में भी आसानी से उगाया जा सकता है।

पूसा ज्योति

यह एक प्रभावी किस्म है, जिसमें काफी संख्या में मुलायम, रसीली तथा बिना रेशे की हरी पत्तियां आती हैं। पौधे काफी बढ़ने वाले होते हैं। इसकी कटाई बहुत कम अंतराल पर की जा सकती है। इस किस्म में ऑल ग्रीन की अपेक्षा पोटेशियम, कैल्शियम, सोडियम तथा एस्कार्बिक अम्ल की मात्रा अधिक पाई जाती है। इस किस्म की कुल 6 से 7 कटाई आसानी से की जा सकती हैं।

हिसार सलेक्शन-23

इसकी पत्तियां बड़ी, गहरे हरे रंग की, मोटी, रसीली तथा मुलायम होती हैं। यह कम समय में तैयार होने वाली किस्म है, जिसकी पहली कटाई बुआई के 30 दिनों बाद शुरू की जा सकती है और 6 से 8 कटाइयां 15 दिनों के अंतर से आसानी से की जा सकती हैं।

ऑल ग्रीन

इस किस्म के पौधे एक समान हरे, मुलायम और पत्ते 15 से 20 दिनों के अंतराल पर कटाई के लिए तैयार हो जाते हैं। इनकी 6 से 7 कटाइयां आसानी से की जा सकती हैं। यह एक अधिक उपज देने वाली किस्म है और इसमें सर्दी के दिनों में लगभग ढाई महीने बाद बीज व डंठल आते हैं।

लॉन्ग स्टैंडिंग

इसकी पत्तियां गहरे हरे रंग की, मोटी व लंबी होती हैं। इस किस्म में फूल धीरे-धीरे निकलते हैं। यह अधिक उपज देने वाली किस्म है। इस किस्म को उत्तर प्रदेश, बिहार एवं उत्तर-पूर्वी पर्वतीय क्षेत्रों में उगाने के लिए संस्तुत किया गया है। यह किस्म शुष्क तथा ऊंचाई वाले पर्वतीय क्षेत्रों के लिए उपयुक्त है।

पंत कम्पोजिट-1

यह काफी उपजाऊ किस्म है तथा इसकी पत्तियों पर सर्कोस्पोरा पत्ती धब्बा रोग का प्रकोप कम होता है।

जोबनेर ग्रीन

इस किस्म में एक समान हरे, बड़े, मोटे, रसीले तथा मुलायम पत्ते आते हैं। पत्ती पकाने पर आसानी से गल जाती है। इस किस्म को क्षारीय मृदा में भी उगाया जा सकता है।

बनर्जी जाइंट

इसके पत्ते काफी बड़े, मोटे तथा मुलायम होते हैं। तने और जड़ें भी काफी मुलायम होती हैं।

पालक खेती के आधुनिक तरीके

पालक की ऑफ-सीजन खेती

सब्जियों के सामान्य मौसम के बाद या उससे पहले ताजी सब्जी का उत्पादन, ऑफ-सीजन सब्जी उत्पादन कहा जाता है। उद्देश्य यह है कि वे अपनी आपूर्ति की कम अवधि के दौरान सब्जियों का उत्पादन और बाजार में आपूर्ति करें। ऑफ सीजन की पालक किसानों को उच्च मूल्य प्रदान करती

इंटरक्रॉप के रूप में पालक

सब्जियों के पोषक तत्वों, विटामिन, खनिज, एंटीऑक्सीडेंट, फाइबर, कार्बोहाइड्रेट, आदि के समृद्ध स्रोत होने और औषधीय मूल्य के कारण उच्च आय और जागरूकता के कारण लोगों के बीच सब्जियों की मांग दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। देशभर में शहरीकरण, उच्च जनसंख्या वृद्धि और औद्योगिकीकरण के कारण भूमि की दिन-प्रतिदिन कमी हो रही है। इसलिए मांग को पूरा करने के लिए प्रति यूनिट क्षेत्र में अधिक सब्जियों का उत्पादन करने की चुनौतियां हैं। इसकी रणनीति होनी चाहिए कि पानी, उर्वरकों के अनुकूलतम उपयोग और कृषि प्रबंधन क्रियाओं को अपनाकर कम जमीन से अधिक मात्रा में सब्जियों का उत्पादन कैसे किया जाए। क्रॉपिंग सिस्टम जैसे इंटरक्रॉपिंग, मिश्रित क्रॉपिंग, रिले क्रॉपिंग आदि विकल्प हैं। इनका प्रति यूनिट क्षेत्र में उच्च उत्पादन के लिए प्रयोग किया जा सकता है। इंटरक्रॉपिंग से तात्पर्य एक ही भूमि पर एक साथ दो या दो से अधिक प्रकार की फसलों को उगाना है। पालक संकीर्ण स्थान लेने वाली एक छोटी अवधि की फसल है। इसका उपयोग भूमि के एक ही टुकड़े से अतिरिक्त आय पैदा करने के लिए इंटरक्रॉप के रूप में किया जा सकता है। वैज्ञानिकों ने विभिन्न सब्जियों पर इंटरक्रॉपिंग का अध्ययन किया और पाया कि पालक का मुख्य फसल पर मूली, प्याज और धनिया की तुलना में बेहतर प्रभाव है। अगर पालक को इंटरक्रॉप के रूप में लिया जाए तो इसे उपयुक्त इंटरक्रॉप माना जाता है। यह अपने संकीर्ण फैलाव के कारण मुख्य फसल की दो पंक्तियों के भीतर बहुत आसानी से बढ़ती है। इसके साथ ही अगर पालक को ऑफ सीजन इंटरक्रॉप के रूप में उगाया जाए तो उच्च विपणन मूल्य प्राप्त होता है। यह किसानों को स्थिर उत्पादन प्राप्त करने और मृदा की उर्वरता के स्तर को बनाए रखने में भी मदद करता है। इंटरक्रॉपिंग सिस्टम के परिणामस्वरूप उपज में लाभ होता है, क्योंकि घटक फसलें विकास संसाधनों के उपयोग में भिन्न होती हैं।

सारणी: बैंगन + पालक इंटरक्रॉपिंग सिस्टम का लाभ-लागत अनुपात

उपचार	लाभ लागत अनुपात
केवल बैंगन 60×60 सें.मी. पर	2.58
केवल पालक 20×5 सें.मी. पर	2.02
केवल युग्मित बैंगन 30/60×60 सें.मी. पर	2.36
बैंगन + पालक (प्रसारण)	2.93
बैंगन + पालक (एक पंक्ति)	3.76
बैंगन + पालक (दो पंक्तियां)	3.45
बैंगन + पालक (तीन पंक्तियां)	3.41
युग्मित पंक्ति बैंगन + पालक (एक पंक्ति)	3.47
युग्मित पंक्ति बैंगन + पालक (दो पंक्तियां)	3.52
युग्मित पंक्ति बैंगन + पालक (तीन पंक्तियां)	3.14
युग्मित पंक्ति बैंगन + पालक (चार पंक्तियां)	2.97

बैंगन की बिक्री का मूल्य 6 रुपये/कि.ग्रा. और पालक 14 रुपये/कि.ग्रा. लिया गया है।
यह शोध सीसीएस हरियाणा कृषि विश्वविद्यालय, हिसार में सब्जी विज्ञान विभाग के अनुसंधान खंड में खरीफ सीजन 2016-17 में किया गया था, जो दिखाता है कि अगर पालक की एक पंक्ति बैंगन की दो पंक्तियों के बीच लगाई जाती हैं तो अधिकतम लाभ प्राप्त होता है।

पालक की इंटरक्रॉपिंग

हैं, जिससे वे अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। पालक की ऑफ-सीजन खेती के लिए अधिक पोषक तत्वों के साथ थोड़े अधिक बीज की आवश्यकता होती है। पालक की ऑफ-सीजन खेती से किसान वर्षभर रोजगार प्राप्त कर सकते हैं और किसान सब्जी उत्पादन की विशिष्ट तकनीक सीख सकते हैं। इसके साथ ही वे आत्मविश्वास विकसित कर सब्जी उत्पादन को अपना मुख्य पेशा बना सकते हैं। इससे उपभोक्ता ताजी सब्जियां प्राप्त कर सकते हैं। कभी-कभी ताजा सब्जियों को निर्यात करना और विदेशी मुद्रा अर्जित करना भी संभव है।

पालक से मूल्यवर्धित उत्पाद

पालक ग्रीन, के दुर्लभ होने पर गर्मियों की बिक्री के लिए यह एक उत्कृष्ट मूल्यवर्धित उत्पाद हो सकता है। आमतौर पर पालक की कैनिंग और फ्रीजिंग की जाती है। फ्रीजिंग आमतौर पर कैनिंग की तुलना में अधिक आसानी से होती है, जूसिंग के लिए पालक आर्टिचोक डिप, पालक सूप पर भी विचार किया जा सकता है।

पालक बीज का उत्पादन

पालक का संकर बीज बहुत महंगा होता है। इसलिए किसान अपनी आय बढ़ाने के लिए पालक बीज उत्पादन भी कर सकते हैं। किसान बीज प्रमाणीकरण एजेंसी के मानदंडों का पालन करके बीज उत्पादन इकाई स्थापित कर सकते हैं और प्रमाणित होने के बाद अपना बीज बेच सकते हैं। इससे उनकी आय में सुधार हो सकता है, क्योंकि पालक की संकर की प्रजाति की उच्च मूल्य पर बिक्री हो जाती है। बीज के उत्पादन के लिए 50 × 30 सें.मी. फासले का प्रयोग करें। पालक के बीज उत्पादन के लिए लगभग 1000 मीटर का क्षेत्र होना चाहिए। प्रत्येक पांच पंक्तियों के बाद एक पंक्ति छोड़नी चाहिए, जो कि खेत के परीक्षण के लिए जरूरी है। रोगी पौधों को हटा दें, पत्तों में विभिन्नता दिखाने वाले पौधों को हटा दें। जब बीज भूरे रंग के हो जाएं तब फसल की कटाई करें। कटाई के बाद पौधों को सूखने के लिए एक सप्ताह के लिए खेत में ही रहने दें। अच्छी तरह से सूखने के बाद बीज लेने के लिए फसल की छंटाई करें। ■

औषधीय पौधों का प्रसंस्करण एवं रोग प्रबंधन

अश्विनी कुमार*, **प्रमोद गुप्ता*** और **पूर्णिमा सिंह***

अश्वगंधा/सर्पगंधा के पत्ते पर ऑल्टरनेरिया पर्ण चित्ती दाग

भारत में औषधीय एवं सगंधीय पौधों का विशाल भंडार विद्यमान है। वर्तमान में परंपरागत फसलों के साथ-साथ कुछ क्षेत्रों में औषधीय फसलों की खेती करना आर्थिक दृष्टि से फायदेमंद है। प्राचीन चिकित्सा पद्धतियों एवं संस्कारों को जीवन्त रखने के लिए यह आवश्यक है कि जड़ी-बूटियों की उपलब्धता बनी रहे। किसानों द्वारा इन फसलों की खेती कर अर्जित आय यह स्पष्ट करती है कि औषधीय पौधों की खेती न केवल ज्यादा लाभकारी है, बल्कि इनके लिए बाजार और मांग भी उपलब्ध हैं। औषधीय एवं सगंधीय पौधों के कृषिकरण तथा जलवायु परिवर्तन के कारण उनमें रोगों एवं कीटों के द्वारा नुकसान भी अधिक होने लगा है।

पिछले कुछ दशकों से विश्व स्तर पर आयुर्वेदिक औषधियों की मांग बहुत तेजी से बढ़ी है। वर्तमान परिप्रेक्ष्य में किसानों के लिए औषधीय पौधों की खेती के माध्यम से आय प्राप्त करने के अवसरों में भी बढोतरी हुई है। औषधियों के विकास के साथ ही प्रमुख औषधीय उत्पादों की गुणवत्ता आदि पर जोर दिया जा रहा है। इसी क्रम में औषधीय पादप उपयोगकर्ताओं की तरफ से भी गुणवत्ता संबंधी समस्याओं के कई प्रकरण सामने आ रहे हैं। इससे पता चलता है कि गुणवत्ता से कोई समझौता नहीं करना चाहते। दूषित औषधियों के प्रयोग से होने वाले खतरे की भयावहता को समाज के समक्ष प्रकट कर दिया है। इस कारण विश्व स्तर पर ऐसे औषद्यीय उत्पादों के गुणवत्ता सुधार नियंत्रण के लिए बहुत से नियम कानून बना दिये गए हैं।

औषधीय उत्पादों की लगातार बढ़ती मांग तथा अधिक मात्रा में व्यावसायिक स्तर पर हो रहे प्राकृतिक दोहन की वजह से पर्यावरण पर प्रतिकूल असर पड़ने लगा है। बहुत सी महत्वपूर्ण औषधीय प्रजातियां लगातार दोहन के फलस्वरूप अपने उत्पत्ति स्थल से विलुप्त होती जा रही हैं। इन सभी समस्याओं के कारण औषधीय निर्माताओं के लिए भी सख्त कानून बनाए गए हैं। इनका सख्ती से पालन करने का दबाव इन निर्माता कंपनियों पर बना हुआ है, जिसकी वजह से उच्च गुणवत्ता के औषधीय उत्पादों की मांग बढ़ रही है। अंततः इस उच्च गुणवत्ता की औषधियों के उत्पादन का भार कृषि पर आ गया है। इसके साथ ही साथ स्थानीय स्तर पर प्रचुरता से मौजूद प्रजातियों के संग्राहकों पर भी उच्च गुणवत्ता के औषधीय उत्पादों के संग्रहण का उत्तरदायित्व डाला गया है। प्रारंभिक उत्पाद की गुणवत्ता पर ही अंतिम उत्पाद की गुणवत्ता निर्भर करती है।

इसके अंतर्गत औषधीय उत्पादों के संपर्क में आने वाली सभी वस्तुएं, उपकरण, पात्र, धोने वाले टब, सुखाने वाले रैक आदि को पूरी तरह से स्वच्छ होना चाहिए। इन उत्पादों के लिए उच्च स्तरीय स्वच्छता की आवश्यकता है।

रोग उत्पन्न करने वाले सूक्ष्म जीव सामान्य आंखों से नहीं दिखाई देते। वे गन्दी वस्तुओं एवं सतहों पर प्रचुर मात्रा में उपस्थित रहते हैं। यदि औषधीय उत्पाद किसी तरह से इन वस्तुओं या सतहों के संपर्क में आते हैं तो रोगजनक सूक्ष्मजीव इनमें आ जाते हैं। इससे निर्मित दवा के प्रयोग से ये स्वास्थ्य को हानि पहुंचाते हैं। इस तरह की घटनाओं की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए बहुत सी औषधि निर्माता कंपनियां ये औषधीय उत्पाद खरीदने से पहले इनकी गुणवत्ता आदि की जांच करती हैं एवं परिणाम के आधार पर ही औषधीय उत्पादों की खरीद की स्वीकृति प्रदान करती हैं। प्रजाति की सटीक पहचान भी एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। कई बार कुछ औषधीय प्रजातियां देखने में कुछ समानता दर्शाती हैं या स्थानीय नाम में समानता की वजह से भी किसी अन्य प्रजाति को एक नाम से बेचा जाता है। इस तरह की भ्रांति के कारण बनी औषधियों से उपभोक्ताओं के स्वास्थ्य को खतरा हो सकता है।

स्थान का चयन

- केवल उन्हीं औषधीय पौधों की खेती किसी क्षेत्र विशेष में की जानी चाहिए, जो कृषि के लिए प्रस्तावित हैं।
- ऐसे क्षेत्र में ही औषधीय पौधों की खेती की जानी चाहिए, जहां स्वच्छ सिंचाई जल की व्यवस्था हो।
- यह सुनिश्चित करें कि औषधीय कृषि के लिए निर्धारित भूमि परंपरागत कृषि भूमि से पर्याप्त दूरी पर हो। परंपरागत कृषि में प्रयुक्त होने वाले रासायनिक उर्वरक आदि इस भूमि तक न पहुंचे।

*पादप रोग विभाग, कृषि महाविद्यालय, जबलपुर (मध्य प्रदेश)

अश्वगंधा का ऑल्टरनेरिया बीजाणु

- संक्रमित भूमि या प्रदूषित वातावरण के आसपास औषधीय पौधों की खेती न करें।
- ऐसी भूमि पर जहां रासायनिक उर्वरकों का छिड़काव होता है या उसके आसपास की कृषि भूमि पर संक्रमण का खतरा होता है, वहां पर औषधीय पौधों की खेती न करें।

भूमि की तैयारी

- चयनित भूमि की मृदा में प्रचुर मात्रा में कार्बनिक पदार्थ उपस्थित हों।
- यह सुनिश्चित हो कि प्रयुक्त खाद अच्छी तरह पक चुकी हो, तभी उसका प्रयोग करें।
- औषधीय प्रजाति की आवश्यकतानुसार ही अच्छी तरह से भूमि की तैयारी करें।
- यदि संभव हो तो मृदा परीक्षण अवश्य करवाएं एवं परीक्षण के परिणाम के आधार पर मृदा में आवश्यक पोषक तत्व प्रयुक्त करें।

बुआई/रोपण

- खेती के लिए पिछली फसल से प्राप्त बीज ही बुआई के लिए उत्तम होते हैं।
- बीज उत्तम आकार के बेहतर स्थिति में हों एवं किसी भी तरह के रसायनों से मुक्त हों। ऐसे बीज ही खेती के लिए सर्वोत्तम होते हैं।
- प्रमाणित बीज एवं रोपण के लिए प्रयुक्त पौधों का ही प्रयोग करें।
- बीज बुआई एवं पौधों का रोपण उचित समय पर करना चाहिए।
- यदि आवश्यक हो तो बुआई के पूर्व जैविक विधि से बीज उपचार करके प्रयोग करें।
- पौधे से पौधे एवं क्यारी से क्यारी के मध्य उचित अंतराल होना चाहिए।
- यदि अंतरवर्ती फसल भी शामिल करते हैं तो यह आवश्यक है कि चयनित प्रजातियों के मध्य पोषक तत्व संबंधी प्रतिस्पर्धा न हो।
- यदि प्रयुक्त बीज आपके द्वारा संग्रहित हैं तो उसमें संग्रहण तिथि एवं प्राप्ति स्थान आदि का ब्यौरा सादे कागज पर लिखकर पैकेट पर चिपका दें।

सिंचाई

- चयनित कृषि भूमि पर कृषि से पूर्व मल्चिंग अवश्य करें, जिससे आवश्यक मृदा नमी बनी रहे।
- सिंचाई जल का उपयोग पूर्व परीक्षण करवाकर, प्रदूषण आदि के बारे में जानकारी लेने के बाद एवं आवश्यक जल उपचार पश्चात ही करें।
- औषधीय पौधों की मांग के अनुसार ही सिंचाई करें। यदि प्रजाति अनुसार जल की आवश्यकता संबंधी जानकारी न हो तो विशेषज्ञ की सलाह के पश्चात सिंचाई की व्यवस्था करें।
- स्वच्छ स्रोत से ही सिंचाई जल लें।

निराई

- निराई उस समय करें, जब पौधे और खरपतवार में पोषक तत्वों के उपयोग की प्रतिस्पर्धा अधिक हो जाए।
- मल्चिंग का प्रयोग अवश्य करें, क्योंकि ऐसा करने से मृदा में पर्याप्त नमी बनी रहती है जिससे खरपतवार कम पैदा होते हैं।

कीट एवं रोग

- ऐसी प्रजाति का चुनाव करें, जो स्थानीय कीटों एवं रोगों के प्रति अधिक रक्षात्मक हो।
- पौधरोधक क्षमता को बेहतर करने के लिए बुआई समय से करें। उचित बीज उपचार, संतुलित पौध रोपण और उचित समय पर सिंचाई आदि करें।
- इसके उपचार के लिए गैर-रासायनिक विधियां जैसे-कम्पेनियम फसलें, ट्रैप फसलें, प्रकाशशोषी फसलें, फसलचक्र का प्रयोग आदि करते रहना चाहिए।
- कीटभक्षी एवं आश्रित जीवों का संरक्षण एवं संवर्धन करें।
- कीट एवं रोगों से निजात पाने के लिए जैविक कीटनाशक व रोगनाशक

उत्पादों को सुखाने हेतु निर्देश

- **वायुवीय भाग-पत्ती आदि:** औषधीय उत्पाद के लिए संग्रहित पत्तियों का रंग बहुत जल्दी काला पड़ जाता है। इसलिए एकत्रित पत्तियों को पतला-पतला फैलाकर सुखाना चाहिए। सीधे सूर्य प्रकाश में सुखाने पर भी इसकी गुणवत्ता प्रभावित होती है। अतः इन्हें छायादार स्थान पर ही सुखाया जाना चाहिए।
- **तना:** तनों को सुखाने में अधिक समय लगता है। सूखते समय बीच-बीच में नाखुन आदि से ऊपरी त्वचा को खुरचकर यह सुनिश्चित कर लें कि अंदर हरापन है या नहीं। यदि है तो उसे और सुखायें।
- **फूल:** पुष्पों को जल्द से जल्द सुखाना आवश्यक है, ताकि इसमें मौजूद तत्व चिपककर सूख जायें। यह भी ध्यान रखना आवश्यक है कि ज्यादा न सूखने पायें, जिससे कि उत्पाद का चूर्ण बन सकता है। ज्यादा तापमान, अति कम तापमान, उचित वायु प्रवाह की कमी आदि से पुष्पीय उत्पाद की औषधीय गुणवत्ता आदि पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।
- **फल:** बड़े आकार के फलों को पतला-पतला काटकर सूखने के लिए तैयार करें। छोटे फलों जैसे-बेरी आदि को सीधे सुखाया जा सकता है। कटे हुए फलों की खुशबू एवं मौजूद तत्व कीट और अन्य जीवों को आकर्षित करते हैं, जिससे संक्रमण का खतरा बना रहता है। इसके साथ ही साथ चिपकने वाले तत्वों आदि की उपस्थिति के कारण धूल के चिपकने का खतरा होता है, जिसे कम करने के लिए सुखाते समय कपड़े या नेट की व्यवस्था की जानी चाहिए।

स्वच्छता एवं सफाई

- औषधीय पौधों का उपयोग करने से पहले बहते हुए साफ पानी से अपने हाथ धो लें, हो सके तो साबुन का प्रयोग करें।
- औषधीय पौधों से संबंधित कार्य करते समय स्वंय की सफाई एवं स्वच्छता पर अधिक ध्यान दें जैसे कि साफ कपड़े, स्वच्छ शरीर, प्रतिदिन स्नान एवं नाखुन कटे हुए होने चाहिएं।
- उन सभी सतहों को साफ रखना चाहिए, जिनके संपर्क में औषधीय पौधे कटाई के दौरान आते हैं।
- सामुदायिक रूप से स्वच्छता व साफ-सफाई को प्रोत्साहित करें।

आदि तथा स्थानीय स्तर पर नियंत्रण के लिए प्रयुक्त विधियों को प्रयोग में लेना चाहिए।

- रासायनिक कीटनाशकों का प्रयोग तभी करें, जब इसके अतिरिक्त कोई विकल्प शेष न हो। यह भी तब, जब कीटनाशक के प्रयोग एवं संग्रहण के बीच पर्याप्त अंतर हो, जिससे यह औषधीय उत्पाद के परीक्षण में न आ जाए।
- यदि रासायनिक कीटनाशक या रोगनाशक का प्रयोग करें तो उसकी खुराक सुनिश्चित करें।
- यदि आवश्यकता हो तो विशेषज्ञ से उचित परामर्श के आधार पर सिंचाई विधि एवं रोग समन्वय आदि की तैयारी करें।

संग्रहण

- संग्रहण में प्रयोग किए जाने वाले सभी उपकरणों एवं पात्रों को अच्छी तरह साफ कर लें।
- संग्रहण तभी करें जब आवश्यक औषधीय गुण उच्च मात्रा में विद्यमान हों।
- सूखे मौसम में संग्रहण करें।
- हरे पत्ते के संग्रहित बोरे आदि छायादार स्थानों में रखें, जिससे कि पदार्थ की गुणवत्ता अधिक नमी एवं ताप में खो न जाए।
- संग्रहित औषधियों को स्वच्छ पात्र में रखें।

कटाई उपरांत प्रसंस्करण के सिद्धांत

प्रदूषण से बचाव

- प्रसंस्करण प्रक्रिया के दौरान संदूषित होने का खतरा सबसे ज्यादा होता है।
- समस्यायें स्थान अनुसार भिन्न-भिन्न हो सकती हैं।
- प्रत्येक उत्पादक को सर्वप्रथम आवश्यक रूप से यह देखना एवं समझना पड़ेगा कि उनकी उत्पादन प्रक्रिया में प्रसंस्करण के किस स्तर पर कौन सी समस्या आ सकती है।
- संदूषण उस किसी भी चीज से हो सकता है, जिसके संपर्क में पौध सामग्री आती है जैसे कि धुआं एवं गंध। इसके साथ-साथ धूल, जानवर, पक्षी, दूसरी प्रजाति के पौधे, मिट्टी, बैक्टीरिया, फफूंद और ऐसी कोई भी वस्तु जो औषधीय पौध सामग्री पर प्रतिकूल प्रभाव डाले, उससे बचाव करें। इस समस्या के समाधान के लिए उत्पादक के लिए यह आवश्यक है कि वह इन सिद्धांतों को समझे एवं स्थानीय संसाधनों के उपयोग से उसे अपनी उत्पादन प्रक्रिया में शामिल करें।

सर्पगंधा में सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती धब्बा रोग

क्षरण एवं क्षति

- प्रसंस्करण प्रक्रियाओं का मुख्य उद्देश्य ताजी पौध सामग्री को ऐसे रूप में परिवर्तित करना है, ताकि उसके औषधीय गुण भविष्य में उपयोग के लिए संरक्षित हो जायें। इसके लिए सामान्यतः पौधों को सुखाने के साथ-साथ अन्य विधियों जैसे कि उनका टिंचर बनाना या तेल निकालना आदि की प्रक्रिया उपयोग में लाई जाती है।
- ऐसे बहुत से कारण हैं, जिनकी वजह से ताजी कटी हुई औषधीय पौध सामग्री का क्षरण हो सकता है जैसे कि अत्यधिक गर्मी या नमी। इन सभी जोखिमों की शुरुआत फसल के कटने के तुरंत बाद से शुरू हो जाती है। सामान्यतः एक महत्वपूर्ण सिद्धांत का पालन किया जाता है कि उत्पाद को जितनी जल्दी हो सके प्रसंस्करण करके पैक कर देना चाहिए। यदि उत्पाद का सुखाने की आवश्यकता है तो प्रजाति की आवश्यकता एवं उपयोग में आने वाले भाग के अनुसार उचित प्रकार से उत्पाद को सुखाना चाहिए।
- **जड़ एवं छाल:** बहुत सी जड़ों एवं छालों को सीधे सूर्य प्रकाश में सुखाया जा सकता है। यदि जड़ या छाल अधिक मोटी है तो उसे पतला-पतला काटकर सुखाया जाना चाहिए।

बीनना एवं छांटना

- सभी गैरऔषधीय उत्पादों को छांटकर अलग कर दें।

सक्रिय औषधीय तत्वों का मूल्य संवर्धन

प्रारंभिक छंटाई

- प्राथमिक छंटाई के लिए प्रसंस्करण सतह या तो सीमेंटेड हो या पॉलीथीन शीट बिछी हो।
- सभी अवांछनीय तत्वों को औषधीय उत्पादों से बारीकी से अलग करें।
- अवांछनीय पौधों को भी उत्पाद से उचित ढंग से बीनकर अलग करें।
- औषधीय उत्पाद के बीच से गुजरने के लिए, साफ करके जगह बना लें।

धुलाई

- औषधीय पौधों के हरे भाग को स्वच्छ जल में ही धोना चाहिए।
- धुलाई के लिए टब का प्रयोग करें।
- सुखाने के पूर्व धुलाई के पानी की उचित निकासी होनी चाहिए।
- जड़ आदि को अच्छी तरह से धोने के लिए अधिक ताकत वाले स्प्रेनोजल का प्रयोग करना चाहिए।

सुखाना

- सुखाने के लिए व्यवस्थित सुखाई यंत्र का प्रबंध करें।
- संग्रहण पश्चात शीघ्र-अतिशीघ्र प्रसंस्करित उत्पाद को सुखा लेना चाहिए।
- औषधीय उत्पाद को सीधे जमीन पर न रखकर जमीन के कुछ ऊपर सुखाने की व्यवस्था करनी चाहिए।
- उचित वायु प्रवाह की व्यवस्था सूखे औषधीय उत्पाद पर करनी चहिए।
- सूख रहे औषधीय उत्पाद की कीटों, पतंगों, पक्षियों आदि से सुरक्षा की व्यवस्था करनी चाहिए।
- सूख रहे उत्पाद की वर्षा जल से सुरक्षा का ध्यान रखना चाहिए।
- उत्पाद को सुखाते समय बिल्कुल पतला-पतला फैलाना चाहिए।
- उचित तापमान पर ही औषधीय उत्पाद को सुखाना चाहिए।
- औषधीय उत्पाद को निश्चित समय तक ही सुखाना चाहिए।
- सूखे हुए औषधीय उत्पाद पर सुखाने की तिथि आदि संबंधी जानकारी को लिखित टैग पर लगाना चाहिए।

- यदि संभव हो तो औषधीय उत्पाद को उनकी गुणवत्ता एवं परिमाण के अनुसार छांटकर अलग-अलग कर लें।

पैकिंग

- साफ एवं नये बोरों में सूखा हुआ उत्पाद भरें। जानकारी पत्रक अवश्य लगाएं।
- यदि संभव हो तो नये बोरों का ही प्रयोग करें।
- सभी पैकिंग उत्पादों में प्रसंस्करण और पैकिंग पश्चात बैच नम्बर, संग्रहण तिथि आदि की पूर्ण जानकारी दें।

औषधीय एवं सगंधीय पौधों में समन्वित रोग प्रबंधन

तुलसी का चूर्णिल आसिता रोग

लक्षण: पत्तियों की सतह पर कवक सफेद चूर्ण के रूप में दिखाई देते हैं। प्रारंभ में ये कवक धब्बों के रूप में दिखाई देते हैं, जो बाद में मिलकर पूरी सतह पर चूर्ण के रूप में फैले जाते हैं। रोगजनक जब अपना पोषण पत्तियों से लेना प्रारंभ करता है तो पत्तियां पीली पड़ जाती हैं एवं बाद में सूख जाती हैं।

रोग जनक: एरीसाइफी बायोसिलाटा

सर्पगंधा में सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती रोग

लक्षण: इस रोग के लक्षण पठारी क्षेत्रों में अगस्त-सितंबर से दिखना प्रारंभ हो जाते हैं। पत्तियों पर छोटे, वृत्ताकार धब्बे बनते हैं। इनके किनारे गहरे तथा मध्य भाग भूरे रंग के होते हैं, जो धब्बे के बड़े होने पर राख के रंग के हो जाते हैं। रोग की तीव्रता होने पर ये धब्बे आपस में मिलकर बड़े विक्षत बनाते हैं, जिससे पत्तियां झुलसकर गिर जाती हैं।

रोगजनक: सर्कोस्पोरा क्रेसीकोला

अश्वगंधा/सर्पगंधा का ऑल्टरनेरिया पर्ण चित्ती रोग

लक्षण: यह रोग केवल पत्तियों को ही संक्रमित करता है, परंतु धब्बे पर्ण-पटल के किसी भी भाग पर बन सकते हैं। पत्तियों की दोनों सतह पर छोटे जलीय, वृत्ताकार धब्बे दिखाई पड़ते हैं। इनके मध्य में उतकक्षयी भाग गिर जाता है, जिससे पत्तियों में छिद्र हो जाते हैं।

रोगजनक: ऑल्टरनेरिया आल्टरनाटा/ऑल्टरनेरिया रेफेनायी

गुड़मार का पर्ण चित्ती रोग

लक्षण: रोग के लक्षण पत्तियों पर धब्बे

औषधीय पौधों की उत्कृष्ट कृषि पद्धति

- **अवांछनीय पदार्थों से बचाव**

औषधीय पौधों की खेती के दौरान बहुत से कारकों की वजह से संक्रमण का खतरा बना रहता है जैसे-कृषि भूमि या सिंचाई में प्रयुक्त जल कीटनाशकों व अन्य रसायनों से अशुद्धि, औद्योगिक प्रदूषण पौधे द्वारा सोखा जा रहा हो या उत्पादित एवं संग्रहित औषधि का गंदे स्थान या पात्र में संग्रहित होना। बहुत सी खरीददार फर्म औषधियां खरीदने से पूर्व खरीदे जाने वाने माल का परीक्षण करवाती हैं। परीक्षण में पदार्थ में मौजूद अशुद्धियों जैसे-रासायनिक खाद, कीटनाशक एवं जीवाणु फफूंद आदि की मौजूदगी का परीक्षण किया जाता है। परीक्षण के दौरान चयनित पदार्थों की ही खरीद की जाती है। परीक्षण में संक्रमित पदार्थों की खरीद को निरस्त कर दिया जाता है।

- **सर्वोत्तम सक्रिय तत्वों की मौजूदगी**

औषधीय उत्पादों का प्रयोग जीवन रक्षक दवाओं में होता है। इसलिए इन कृषि उत्पादों में औषधीय गुणों का अधिक मात्रा में होना जरूरी है। औषधीय गुणों पर कृषि स्थल, कृषि में प्रयुक्त किस्म, सिंचाई चक्र, संग्रहण समय आदि आवश्यक घटकों का प्रभाव पड़ता है। ये सभी घटक शोध के पश्चात प्राप्त विधि से अधिक औषधीय गुणों को प्राप्त करने में सहायक सिद्ध होते हैं।

- **उत्तम उत्पादन एवं लाभ**

उत्कृष्ट कृषि पद्धति से यह भी ज्ञात होता है कि उत्पादन को कैसे बढ़ाया जाए, जिससे कि किसानों को अधिक से अधिक लाभ प्राप्त हो। इस क्रम में बेहतर बीज, कतारों के बीच पर्याप्त दूरी, पोषक तत्व प्रबंधन, खरपतवार नियंत्रण, रोग उपचार व्यवस्था, सिंचाई विधि और संग्रहण अवस्था एवं समय आदि का उल्लेख किया जा सकता है जिनका सीधा प्रभाव उत्पादन एवं उत्पादों की गुणवत्ता पर पड़ता है। इन निर्देशों एवं सिद्धांतों के अनुपालन से कृषकों को अधिकतम उत्पादन एवं उच्च औषधीय गुण वाले उत्पाद प्राप्त हो सकते हैं।

- **उपयुक्त दस्तावेजीकरण**

यह एक महत्वपूर्ण बिन्दु है, जिससे उत्पादों की उत्पादन संबंधी सभी जानकारियां एक दस्तावेज में उपलब्ध होती हैं। यदि दस्तावेज तैयार किया जाता है तो इसके माध्यम से पहचान एवं गुणवत्ता संबंधी तथ्यों की जानकारी भविष्य के लिए सुगम होगी। यह तभी संभव हो सकेगा, जब पौधे की प्रत्येक अवस्था की पूरी-पूरी जानकारी का दस्तावेजीकरण किया गया हो। इन सभी आवश्यकताओं की वजह से निर्देशिका में दस्तावेज को अहम रूप से रखा गया है। निर्देशिका में निर्दिष्ट करें व न करें, के बिन्दुओं में औषधीय पौधों की उत्कृष्ट कृषि विधि में जरूरी सिद्धांतों को सरल ढंग से प्रस्तुत किया गया है। इससे कृषि, उत्पादन वृद्धि, अवशिष्ट पदार्थों के नियमन, औषधीय गुणों की वृद्धि एवं दस्तावेज निर्माण एवं आवश्यकता संबंधी तथ्यों को बोधगम्य बनाया जा सकता है।

ट्राइकोडर्मा

यह एक जैव नियंत्रक मृतोपजीवी स्वतंत्र फफूंद है। यह मृदा में सड़े-गले कार्बनिक पदार्थों के ऊपर तीव्र गति से वृद्धि करता है। यह प्राय: मृदा और पौध जड़ के पारिस्थितिकी तंत्र में पाया जाता है। वर्तमान शोध में यह पाया गया है कि ट्राइकोडर्मा समयानुसार पौध परपोषी है और यह पुन: मृदा में उत्पन्न होकर स्पर्धा के साथ भूमि में अधिक समय तक जीवित रह सकता है। विपरीत परिस्थितियों में भी ट्राइकोडर्मा स्वस्थ पौध जड़-तंत्रों में जीवित रहता है। ट्राइकोडर्मा, सेप्रोफाइटिक फफूंद है और यह अम्लीय एवं उदासीन मृदा में भी वृद्धि करता है। यह नम अवस्था में अच्छी तरह पनपती है। इस फफूंद का कवक तंतु रोगकारक कवक तंतु को चारों तरफ से आच्छादन एवं भेद करके, उसके अंदर के कोशिका द्रव्य को खाद के रूप में अवशोषित करके फफूंद को मार देता है।

प्रयोग विधि

- **मृदा उपचार:** 2.5 कि.ग्रा. ट्राइकोडर्मा पाउडर को 75 कि.ग्रा. कम्पोस्ट या वर्मीकम्पोस्ट में अच्छी तरह मिलाकर दो सप्ताह के लिए छायादार स्थान पर रख देते हैं, इस प्रकार ट्राइकोडर्मा पूरे कम्पोस्ट में अच्छी प्रकार से कवक जाल एवं बीजाणु को फैला देता है। इसके बाद इसे एक हैक्टर क्षेत्रफल मृदा में फैला देते हैं। इसके उपरांत फसल की बुआई कर सकते हैं।

आकार एवं माप में बहुत छोटी बिंदी से लेकर गोल आंख के आकार का या गोल होता है। छोटा धब्बा गाढ़े भूरे रंग का होता है। बीच का भाग पीलापन लिए गंदा सफेद या धूसर रंग का हो जाता है।

रोगजनकः ड्रेस्लेरा स्पीसीफिरा

अश्वगंधा का स्क्लेरोशियम अंगमारी रोग

रोगजनकः स्क्लेरोशियम स्क्लेरोथियोरम

लक्षणः रोग के लक्षण मुख्य भूमि की सतह पर तनों के चारों तरफ तथा तनों पर कवक जाल के रूप में दिखाई देते हैं। बाद में उन्हीं स्थानों पर लाल-भूरे रंग के छोटे-छोटे, गोल, रोगजनक के स्क्लेरोशियम दिखाई देते हैं। इस स्थिति में पूरे पौधे या कभी-कभी पौधे के कुछ भाग मर जाते हैं।

जैव उत्पादः जैव उत्पादों के प्रयोग से अभिप्राय है जीव (जैसे कवक, जीवाणु, विषाणु एवं सूत्रकृमि) अथवा इन जीवों से निर्मित उत्पाद जो पौधों को नुकसान पहुंचाने वाले जीवों को नष्ट करें या उनकी संख्या को कम करें। जैविक उत्पाद न केवल औषधीय और सगंधीय गुण को बनाये रखने में सहायक होते हैं, बल्कि रासायनिक दवाओं के दुष्प्रभाव को कम करने में भी मददगार होते हैं। औषधीय एवं सगंधीय पौधों में जैविक उत्पादों द्वारा कीट एवं रोग नियंत्रण अति आवश्यक है। रासायनिक दवाओं के प्रयोग से इन पौधों की गुणवत्ता में कमी आ सकती है या उनमें उपस्थित औषधीय तत्व प्रभावित हो सकते हैं। इन बिंदुओं को ध्यान में रखते हुये निम्न जैव उत्पादों का प्रयोग रोग नियंत्रण में किया जा सकता है:

- गौमूत्र
- नीम
- पत्तियों का रस
- ट्राइकोडर्मा
- स्यूडोमोनास
- ट्राइकोग्रामा
- बैसिलस थुरिनजियेन्सिस (बी.टी.)
- ई.पी.एन. (इंटोमोपैथोजेनिक निमेटोड)

गौमूत्र

गौमूत्र में विभिन्न प्रकार के तत्व जैसे-गंधक, नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, लोहा, सोडियम इत्यादि पाये जाते हैं, जिनके प्रयोग से फफूंदजनित रोगों का नियंत्रण होता है।

प्रयोग विधि

- देसी गाय के 10 लीटर गौमूत्र को तांबे के बर्तन में लेकर उसमें एक कि.ग्रा. नीम के पत्ते डालकर 10-15 दिनों तक छोड़ दें। इसके बाद इसे तांबे की कड़ाही में उबालें, जब उसकी मात्रा आधी (5 लीटर) रह जाये तो छान लें तथा 400-500 लीटर पानी में मिलाकर फसलों पर छिड़काव करें।

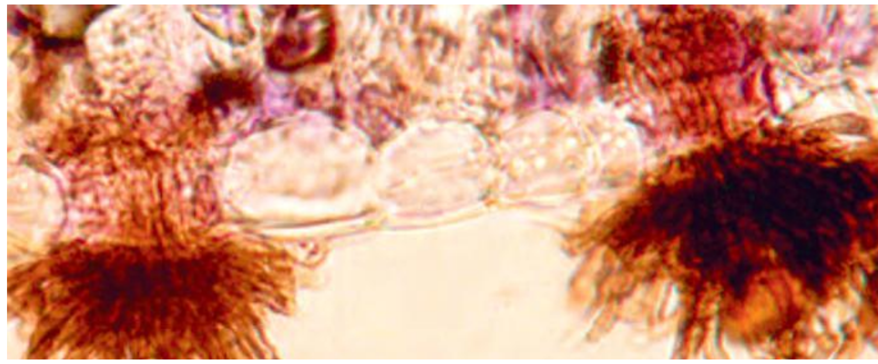

सर्कोस्पोरा पर्ण चित्ती धब्बा रोगजनकः सर्कोस्पोरा क्रेसीकोला

नीम

फसल सुरक्षा में नीम आधारित पदार्थ लाभप्रद एवं बिना दुष्प्रभाव के होते हैं। इनका प्रयोग मानव द्वारा प्राचीनकाल से ही विभिन्न रोगों के नियंत्रण में होता रहा है। वर्तमान में इनका प्रयोग कृषि के हर क्षेत्र में हो रहा है। अनेक शोध परिणामों से यह सुनिश्चित हो चुका है कि नीम आधारित रसायन फसल में लगने वाले रोगों से सुरक्षा प्रदान करते हैं।

प्रयोग विधि

- नीम की 25 कि.ग्रा. पत्तियां 400-500 लीटर पानी में 4-5 दिनों तक भिगोकर रखें और जब पानी हरे-पीले रंग का दिखने लगे तो इसे निचोड़कर छान लें। छना हुआ यह मिश्रण एक हैक्टर क्षेत्र के पर्ण धब्बों के नियंत्रण के लिए पर्याप्त होता है।

पत्तियों के रस का प्रयोग

नीम, जैट्रोफा, करंज, शरीफा, सदाबहार, महुआ, सफेदा, बेल, सहजन, क्रोटन, भांग, तारामीरा, मदार, धतूरा, मेंहदी, तंबाकू, तुलसी, लैन्टाना, गेंदा, गुलदाउदी एवं चिरायता जैसे अनेक पौधे ऐसे हैं, जिनमें रोग नियंत्रण के लिए विशिष्ट तत्व पाये जाते हैं। ऐसे पौधों की पत्तियों के रस के प्रयोग द्वारा फसल में लगने वाले रोगों से रोकथाम की जा सकती है।

प्रयोग विधि

ऐसे पौधों की पत्तियों की 20 कि.ग्रा. मात्रा महुआ अथवा गुड़ के साथ 15 लीटर पानी में मिलाकर सात दिनों तक सड़ने के लिए छोड़ देते हैं। इसके बाद इसे भट्टी में उबालकर संघनित किया जाता है, जब 4-5 लीटर द्रव एकत्रित हो जाये तो आसवन की प्रक्रिया बंद कर देते हैं। इस द्रव का प्रयोग विभिन्न पर्ण धब्बों, झुलसा, मृदाजनित रोगों आदि के नियंत्रण के लिए किया जाता है।

स्यूडोमोनास

स्यूडोमोनास एक जीवाणु है, जो मृदाजनित रोगों (विशेषकर फ्यूजेरियम एवं राइजोक्टिनिया द्वारा उत्पन्न रोग) के नियंत्रण के लिए प्रयोग किया जाता है। यह प्रायः मृदा, जल एवं पादप सतह पर उपनिवेशन स्थापित करता है।

प्रयोग विधि

- **पौध जड़ का उपचारः** पौधों की जड़ों को 5-10 मि.ली. स्यूडोमोनास प्रति लीटर पानी के घोल में 30 मिनट तक डुबोकर उपचारित करने के पश्चात रोपण करना चाहिए।
- **मृदा उपचारः** बुआई अथवा रोपण पूर्व 2.5 कि.ग्रा. स्यूडोमोनास पाउडर को 75 कि.ग्रा. कम्पोस्ट या वर्मीकम्पोस्ट में अच्छी तरह मिलाकर एक हैक्टर खेत की मिट्टी में फैला देते हैं। इसके उपरांत फसल की बुआई कर सकते हैं।

ई.पी.एन. (इंटोमोपैथोजेनिक निमेटोड)

यह रोगजनक का एक घातक परजीवी है, परंतु ये पौधों तथा मृदा में उपस्थित रीढ़ सहित एवं रीढ़रहित प्राणियों को कोई हानि नहीं पहुंचाते हैं। स्टीनरनीमा एवं हेटरोरैबडिटिस वंश के सूत्रकृमियों का जीनोरेब्ड्स वंश के जीवाणुओं के साथ परस्पर गठबंधन होता है। इस प्रकार यह सूत्रकृमि जीवाणुओं की सहायता से नाशीजीवों को 24-28 घंटों में समाप्त कर देता है।

प्रयोग विधि

- इन जीवों की क्रियाशीलता 12^0-28^0 सेल्सियस पर अधिकतम रहती है। तापमान 28^0 सेल्सियस से अधिक होने पर हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए, जिससे सूत्रकृमि भूमि में नीचे चले जाएं तथा वहां पर उपस्थित हानिकारक जीवाणुओं पर अपना चक्र पूरा कर लें।

फल

कैसे लें खुबानी की भरपूर उपज

जितेंद्र कुमार*, **के.के. प्रामाणिक***, **ए.के. शुक्ला*** और **संतोष वाटपाडे***

वर्ष 2016-17 के बागवानी आंकड़ों के अनुसार हिमाचल प्रदेश में 3650 हैक्टर क्षेत्रफल में 11514 मीट्रिक टन खुबानी का उत्पादन हुआ और प्रतिवर्ष इसके उत्पादन में बढ़ोतरी हो रही है। दूसरे शीतोष्ण फलों की तरह खुबानी भी स्वादिष्ट फल है और जितनी भी इसकी पुरानी प्रजातियां आज उगाई जा रही हैं उनकी उत्पत्ति चीन, कोरिया, जापान, तिब्बत और अफगानिस्तान से है। संयुक्त राष्ट्र के खाद्य व कृषि संगठन के वर्ष 2011 के आंकड़ों के अनुसार भारत में केवल 10,000 टन प्रतिवर्ष खुबानी का उत्पादन होता था और भारत, इसके उत्पादन में विश्व में 38वां स्थान पर था। तुर्की 7,16,415 टन तक प्रतिवर्ष उत्पादन के साथ खुबानी उत्पादन में अग्रणी है। आज तुर्की से लेकर कैलिफोर्निया ब्रांड तक की खुबानियां बाजार में उपलब्ध हैं।

खुबानी (प्रूनस अर्मेनिका) रोसेसी परिवार से संबंधित है। यह विश्व के पश्चिमी और मध्य एशिया, यूरोप, उत्तर-पश्चिमी हिमालय क्षेत्र तथा पश्चिमी तिब्बत के इलाकों में उगाई जाती है। खुबानी का उत्पादन स्थायी तौर पर चीन से माना जाता है। भारत में इसका उत्पादन जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के कुछ इलाकों में किया जाता है। भारत के ठंडे व शुष्क इलाकों में खुबानी का उत्पादन अत्यधिक होता है। इन इलाकों में लद्दाख के कारगिल एवं लेह क्षेत्र और हिमाचल प्रदेश के लाहौल-स्पीति, किन्नौर व शिमला जिले के कुछ क्षेत्र शामिल हैं।

भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला, हिमाचल प्रदेश में खुबानी की लगभग 20 प्रजातियों का उत्पादन और अनुसंधान संबंधित आंकलन कार्य किया जा रहा है। ये सभी प्रजातियां शीतोष्ण फलों के अंतर्गत आती हैं और ठंडे व शुष्क इलाकों में उगाई जाती हैं। लगभग मई-जून में तैयार होने वाली ये सभी किस्में जुलाई तक उपलब्ध रहती हैं। खुबानी की उपलब्धता वाले इलाकों जैसे-लेह-लद्दाख, कारगिल तथा किन्नौर और लाहौल-स्पीति (हिमाचल प्रदेश) में ये अगस्त तक उपलब्ध रहती हैं। सुखाई गई खुबानी की उपलब्धता वर्षभर रहती है। असंगठित बाजार और खराब वितरण व बिक्री के कारण ज्यादातर फल नष्ट हो जाते हैं। सामान्यत: खुबानी दो प्रकार की होती है एक मीठी गिरी वाली और दूसरी कड़वी गिरी वाली। इन प्रजातियों को उत्तर-पश्चिमी हिमालय क्षेत्र के ठंडे व शुष्क इलाकों में उगाया जा रहा है। खुबानी की दो स्थानीय प्रजातियों 'हालमन' और 'राकइकार्पो' को लेह-लद्दाख इलाकों में उगाया जा रहा है।

पश्चिमी हिमालय क्षेत्र के ठंडे व शुष्क इलाकों में उगाई जाने वाली अन्य प्रजातियों के नाम न्यू कैसल, कैशा, नारी किन्नौर, सफेदा, मुरपार्क, चारमगज, हरकोट, सत अम्ब्रेसे, नगेट, बाती, ई.सी. 232328, अर्ली शिप्ली, रॉयल, सनेफ-ए, सनेफ-सी, लोकल स्पेशल आदि हैं। इनका सफलतापूर्वक विश्लेषण व आंकलन कार्य भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला (हिमाचल प्रदेश) में किया जा रहा है। इससे संबंधित विवरण सारणी-1 में वर्णित हैं। इसकी परिपक्वता अवधि लगभग 75-100 दिनों की है।

जंगली खुबानी का मुख्यत: मूलवृन्त के तौर पर इन पौधों को कलम बांधने व आंख लगाने आदि क्रियाओं में पौधे तैयार करने के लिए उपयोग किया जाता है। आड़ू के पौधों को भी खुबानी के मूलवृन्त के तौर पर शुष्क व हल्की मृदा वाले क्षेत्र में तथा मिरोबलान पल्म को ज्यादा नमी वाले क्षेत्र मूलवृन्त के रूप में खुबानी की पौध तैयार करने के लिए उपयोग किया जाता है। कलम बांधने का कार्य मुख्यत: फरवरी-मार्च में विभिन्न प्रक्रियाओं द्वारा किया जाता है, जबकि आंख लगाने की प्रक्रिया की सिफारिश जुलाई-अगस्त में की जाती है।

उत्पादन बढ़ाने के उपाय

देश में खुबानी का उत्पादन क्षेत्र व उत्पादकता धीरे-धीरे बढ़ रही है। यह बढ़ोतरी दूसरे देशों की तुलना में उस स्तर तक नहीं पहुंची है, जहां बागवान इस पर अपनी निर्भरता रख सकें। अच्छे बिक्री केंद्र का अभाव, फल संरक्षण का उचित प्रबंध न होना, फल प्रसंस्करण की सुविधा का अभाव, उचित दाम न मिलना आदि सहित अन्य प्राकृतिक कारणों से बागवान खुबानी उत्पादन की ओर

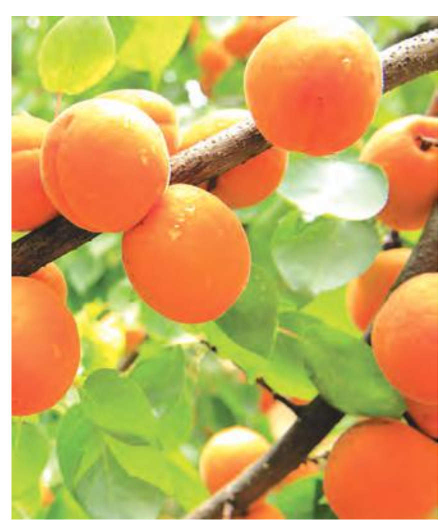

खुबानी के परिपक्व फल

*भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला-71004 (हिमाचल प्रदेश)

सारणी 1. खुबानी की विभिन्न प्रजातियों के फलों का विवरण और परिपक्वता अवधि

क्र. सं.	प्रजाति	ताजा फल वजन (ग्राम)	फल की लंबाई (मि.मी.)	फल की चौड़ाई (मि.मी.)	टी.एस.एस (ब्रिक्स)	गिरी का स्वाद	फल परिपक्वता की अवधि (दिन)
1	ई.सी. 233228	37.25	38	39	16.3	कड़वा	75
2	न्यू कैसल	11.25	24	24	19.4	कड़वा	80
3	सुफेदा ओब्लॅांगा	29.7	34	38.5	20.8	मीठा	72
4	नारी किन्नौर	26	35	34.5	21.35	मीठा	77
5	मूरपार्क	17.2	29	29	18.55	कड़वा	78
6	चरमागज	32.1	38	34	18.4	मीठा	75
7	हरकोट	34.15	37	36	18	कड़वा	75
8	एप्रीकॉट सलेक्शन शिमला	80.25	53.5	50	19.25	कड़वा	78
9	सट. एम्ब्रेसे	31.1	36.5	35.5	16.3	कड़वा	82
10	नगेट	19.7	33	30	20.65	मीठा	80
11	बत्ती	43.15	40	40	19.35	मीठा	92
12	कैशा	13.85	26	26.8	19.2	कड़वा	90
13	सनेफ्फ-ए	34.25	36.5	35.5	18	कड़वा	92
14	सऐटीच कलेक्शन	22.9	28	29.5	22.4	मीठा	87
15	एप्रीकॉट सीडलिंग (लोकल)	9.55	26.5	21.5	32.45	मीठा	80
16	ई.सी. 168342	32.1	42	35	14.8	कड़वा	92
17	लोकल स्पेशल	44.4	45.5	40	13.75	मीठा	80
18	सऐटीच-1	29.9	38.5	35.5	16.05	मीठा	85
19	करसोग सलेक्शन	67.97	54.5	44.5	16.5	मीठा	85
20	रॉयल	38.73	40.5	38	16.7	मीठा	90

ज्यादा ध्यान नहीं देते हैं। ऐसे में ज्यादातर फल खराब हो जाते हैं, क्योंकि खुबानी का फल नरम व मुलायम होता है तथा ज्यादा देर तक नहीं टिकता है। खुबानी की बिक्री के समय इसका फल थोड़ा नरम, कोमल, मध्य परिपक्वता वाला तथा चबाने लायक होना चाहिए। फल प्रसंस्करण की अच्छी सुविधाओं के साथ फलों का सही प्रबंधन किया जा सकता है। बागवानों को खुबानी की गिरी व गूदा अलग-अलग कर बेचने से अच्छी आमदनी हो सकती है। खुबानी उत्पादन में अनुसंधान बढ़ाने की जरूरत है, ताकि हम अन्य देशों की तरह उस स्तर तक पहुंच सकें जहां बागवानों को इसका पूरा लाभ मिले।

खुबानी की उपयोगिता

खुबानी का सफेद गूदा और मीठी गिरी वाली प्रजातियों का उत्पादन समुद्र तल से 3,000 मीटर तक की ऊंचाई तक तथा पीला गूदा और कड़वी गिरी वाली प्रजातियों का

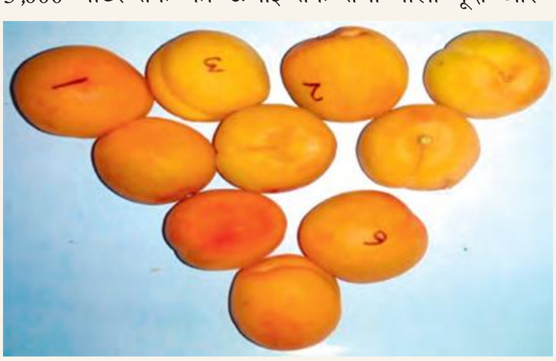

खुबानी के मूरपार्क प्रजाति के फल

उत्पादन 1,000-1,500 मीटर तक की ऊंचाई पर अच्छा माना जाता है। लंबे शीत घंटे और गर्म वसंत, 100 सें.मी. तक वार्षिक वर्षा तथा 6-7 पी-एच मान की गहरी मृदा को खुबानी के फलों की अच्छी उत्पादकता के लिए उपयुक्त माना जाता है। कई क्षेत्रों में खुबानी के वृक्षों के बीच में मटर, फ्रांसबीन, सोयाबीन व अन्य आभासी खाद्यान्न आदि का भी उत्पादन किया जाता है। इसके 100 ग्राम फल में 48 कि.ग्रा. कैलोरी, 2 ग्राम रेशा तथा प्रोटीन व खनिज भरपूर मात्रा में होते हैं। इसकी गिरी के तेल को हृदय व लीवर के लिए अच्छा माना जाता है। सुखाई गिरी को सूखे मेवे के रूप में भी उपयोग किया जाता है। खुबानी के फलों की परिपक्वता में फल सेटिंग के बाद 75-130 दिन लगते हैं, जो कि प्रजाति पर निर्भर करता है।

प्रसंस्करण के लिये उपयुक्त खुबानी

ये सुधार खुबानी उत्पादन के लिए अच्छी प्रजातियों के चयन के रोपण, उत्पादन, फसलोत्तर प्रौद्योगिकी में सुधार, संगठित बिक्री केंद्र से लेकर मूल्य संवर्धन तथा निर्यात की सुगमता आदि तक रहने जरूरी हैं। इस क्षेत्र में आगे बढ़ने के लिए पर्याप्त अनुसंधान और शोध की जरूरत है, ताकि हम खुबानी उत्पादन को अन्य फलों के उत्पादन के साथ सही स्थान दिला सकें।

सहजन है अनमोल गुणों से भरपूर

पुनिता पी.*, **जे.पी.एस. डबास***, **प्रतिभा जोशी***, **सर्वाशीष चक्रवर्ती***, **निशि शर्मा*** और **नफीस अहमद***

भारतीय उपमहाद्वीप आर्थिक रूप से असंख्य महत्वपूर्ण सब्जियों की जन्मभूमि है। उनमें से खनिज एवं विटामिन से भरपूर एक सब्जी है सहजन, जिसको लोगों ने सदियों से अपने आंगन में बड़े जतन से स्थान दिया हुआ है। पिछले दस वर्षों से सहजन को लेकर भारतीयों में रुझान बढ़ा है। इसके उत्पादन, तेल निष्कर्षन, सामाजिक वानिकी और जल परिशोधन में प्रयोग एवं पोषक गुणों को लेकर शोधकार्य किए जा रहे हैं। सहजन, लंबी फलियों वाला एक सब्जी का पेड़ है। यह भारत और दुनियाभर में उगाया जाता है। विज्ञान ने प्रमाणित किया है कि इस पेड़ का प्रत्येक भाग स्वास्थ्य के लिए बहुत लाभदायक है। सहजन को अंग्रेजी में मोरिंगा या ड्रमस्टिक कहते हैं। ज्यादातर भारतीय इसका उपयोग सब्जी व अन्य भोजन बनाने में करते हैं। इसकी खासियत यही है कि इसे पानी की कमी होने की स्थिति में भी उगाया जा सकता है। सहजन की पत्तियां, फलियां, फूल आदि सभी भाग मनुष्य और पशु दोनों के लिए पोषक तत्वों से भरपूर हैं। यह कई तरह के जरूरी पोषक तत्वों, खनिज पदार्थों और विटामिन का बेहतरीन स्रोत है, इसलिए दुनियाभर में इसे *सुपर फूड* कहा जाता है।

देश में सहजन मुख्य रूप से तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक और केरल जैसे दक्षिणी राज्यों में उगाया जाता है तथा स्थानीय लोगों द्वारा इसका सेवन किया जाता है। इसके अतिरिक्त पूर्वी भारत के बंगाल में भी इसकी फलियां, फूल और पत्तों को खाया जाता है। सूखी सब्जी, दाल के साथ और कई प्रकार से बंगाल में इसका उपयोग किया जाता है। इसकी नई पत्तियों का साग, सूप, फूलों की पकौड़ियां के रूप में सेवन किया जाता है। सहजन का वैज्ञानिक नाम मोरिंगा ओलीफेरा है। हिंदी में इसे सहजन, मराठी में शेवागा, तमिल में मुरुंगई, मलयालम में मुरिन्गन्गा और तेलुगू में मुनागाक्या कहते हैं। मोरिंगेसी फैमिली के मोरिंगा प्रजाति के सहजन की खेती बड़े पैमाने पर होती है।

बारहमासी सहजन के लिए स्टेम कटिंग ज्यादा पसंद की जाती है। पौधों की मध्यम छंटाई ऊपर से 70 सें.मी. शूट तक की जानी चाहिए ताकि फूलों को नियंत्रित किया जा सके और इससे 37 कि.ग्रा./वृक्ष की उच्चतम उपज प्राप्त की जा सके।

सारणी 1. गहन सहजन पत्ती उत्पादन

रोपण से पहले	जल निकासी और अच्छे जड़ विकास को प्रोत्साहित करने के लिए 60 सें.मी. की गहराई के लिए रोटावेटर का प्रयोग
रोपण	10 × 10 सें.मी. घनत्व (1 मिलियन पौधे/हैक्टर)
कटाई	जब पौधे 50 सें.मी. या उससे अधिक की ऊंचाई तक पहुंचें, तो हर 35-40 दिनों में इनकी कटाई की जा सकती है। औसतन, एक वर्ष में इसकी नौ फसलें ली जाती हैं।
उपज	650 मीट्रिक टन पत्ती उपज

*भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012

सारणी 2. वार्षिक सहजन उत्पादन के लिए बुनियादी जानकारी

उपयुक्त मृदा	अच्छी जल निकासी के साथ रेतीली व दोमट मृदा। यह जल जमाव के प्रति अत्यधिक संवेदनशील फसल है। कम गुणवत्तावाली मृदा में भी यह पौधा लग जाता है। इसकी वृद्धि के लिए गर्म और नमीयुक्त जलवायु तथा फूल खिलने के लिए सूखा मौसम उपयुक्त है। सहजन के फूल खिलने के लिए 25 से 30 डिग्री तापमान अनुकूल है। इसका पौधा सूखी बलुई या चिकनी बलुई मृदा (जिसमें 6.2 से 7.0 पी-एच हो) में अच्छी तरह बढ़ता है।
नर्सरी	सहजन की खेती में अगर आप नर्सरी में उगाये पौधे का इस्तेमाल करना चाहते हैं तो 18 सें.मी. की ऊंचाई और 12 सें.मी. की चौड़ाई वाले पॉलीबैग का इस्तेमाल करें। बैग के लिए मृदा का मिश्रण हल्का होना चाहिए, उदाहरण के तौर पर तीन भाग मृदा और एक भाग बालू। प्रत्येक बैग में एक से दो सें.मी. गहराई में दो या तीन बीज लगाएं। मृदा में नमी रहे, लेकिन ध्यान रखें कि ज्यादा भीगी न हो। अंकुरण 5 से 12 दिनों के भीतर शुरू हो जाता है। बैग से अतिरिक्त पौधे निकाल दें और एक पौधा प्रत्येक बैग में छोड़ दें। जब पौधे की लंबाई 60 से 90 सें.मी. हो जाए तब उसे बाहर लगा सकते हैं। पौधे को बाहर लगाने से पहले बैग के तल में इतना बड़ा छेद बना दें ताकि उसकी जड़ें बाहर निकल सकें। इस बात का ध्यान रखें कि पौधे के जड़ के आसपास मृदा पर्याप्त हो। पौधरोपण से पहले बीज को पानी में रात भर भीगने के लिए डाल दें तथा पौधरोपण से पहले छिलके को हटाकर सिर्फ गुठली को लगाएं।
पौध से पौध की दूरी	2.5 मीटर × 2.5 मीटर
बीज दर	625 ग्राम/हैक्टर
बीज बोने से पूर्व उपचार	एजोस्पिरिलम उपयोग करने से बीज शक्ति बढ़ जाती है
गड्ढे का आकार	45 × 45 × 45 सें.मी.
पौधों की संख्या	1600 पौधे प्रति हैक्टर, यदि पौधों की स्टेम कटिंग लिया जाए तो कटिंग 4-16 सें.मी. के व्यास के साथ 45-180 सें.मी. बीज की तुलना में, कटिंग तेजी से बढ़ती है परंतु नमी, तनाव और हवा के प्रति अतिसंवेदनशील होती है।
नमी प्रबंधन	सहजन की खेती की सबसे बड़ी बात यह है कि इसका वृक्ष सूखे की स्थिति में कम से कम पानी में भी जिंदा रह सकता है। यह फूल और फल पर्याप्त पानी उपलब्ध होने पर देता है। अगर वर्षभर बरसात होती रहे तो सहजन भी वर्षपर्यन्त उत्पादन कर सकता है। सूखे की स्थिति में फूल खिलने की प्रक्रिया को सिंचाई के माध्यम से तेज किया जा सकता है। इसका पौधा काफी दमदार होता है और सूखे मौसम में प्रत्येक दो सप्ताह में एक बार सिंचाई की जरूरत होती है। वहीं, व्यावसायिक खेती में सिंचाई की ड्रिप तकनीक का सहारा लिया जा सकता है। इसके तहत गर्मी के मौसम में प्रति पेड़, प्रतिदिन 12 से 16 लीटर पानी दिया जा सकता और अन्य मौसम में यह मात्रा घटकर सीधे आधी रह जाती है। वार्षिक सहजन में बारहमासी सहजन की तुलना में अक्सर सिंचाई की आवश्यकता होती है। वार्षिक सहजन में 7-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई और बारहमासी सहजन में 10-15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई की जानी चाहिए। पूरी तरह से फल परिपक्वता के दौरान सिंचाई नहीं करनी चाहिए। मृदा की नमी के संरक्षण के लिए मल्चिंग की जाती है।
उर्वरक प्रयोग	रोपण के तीन महीने के बाद 100 ग्राम यूरिया, 100 ग्राम सुपर फॉस्फेट एवं 50 ग्राम पोटाश प्रति गड्ढे की दर से डालें तथा इसके तीन महीने बाद 100 ग्राम यूरिया प्रत्येक गड्ढे में पुनः डालें। सहजन पर किए गए शोध में यह पाया गया कि मात्र 15 कि.ग्रा. गोबर की खाद प्रति गड्ढे तथा एजोस्पिरिलम और पी.एस.बी. (5 कि.ग्रा./हैक्टर) के प्रयोग से इसकी जैविक खेती, उपज में बिना किसी ह्रास के की जा सकती है।
कटाई	रोपण के 7-8 महीने बाद उपज मिलने लगती है। पेड़ की कटाई-छंटाई पौधरोपण के एक या डेढ़ वर्ष बाद (ठंडे मौसम में तरजीह दे सकते हैं) की जा सकती है। दो फीट की ऊंचाई पर प्रत्येक पेड़ में 3 से 4 शाखाएं छांट सकते हैं। मानव आहार के खाने के लिए जब कटाई की जाती है तो फलियों को उस समय तोड़ लिया जाना चाहिए जब वे कच्ची (लगभग एक सें.मी. मोटी) हों और आसानी से टूट जाती हों। पुरानी फली (जब तक पकना शुरू न हो जाए) का बाहरी भाग कड़ा हो जाता है लेकिन बीज सफेद और उसका गूदा खाने लायक रहता है। पौधरोपण के लिए बीज या तेल निकालने के मकसद से फलियों को पूरी तरह तब तक सूखने देना चाहिए जब तक कि वे भूरी न हो जाएं। कुछ मामलों में ऐसा जरूरी हो जाता है कि जब एक ही शाखा में कई फलियां लगी होती हैं तो उसे टूटने से बचाने के लिए सहारा देना पड़ता है। फलियों के फटने और उनके पेड़ से गिरने से पहले तोड़ लेना चाहिए। बीज का संग्रहण छायादार जगह में साफ-सुथरे सूखे बैग में किया जाना चाहिए।
शीर्ष फसल	मार्च-अगस्त
पौधे की ऊंचाई	4-6 मीटर/वर्ष
औसत उपज	52 टन/हैक्टर पत्तियां व 250-400 फलियां

देश में आजकल, उपभोक्ता स्वस्थ रहने के लिए पोषण से समृद्ध उत्पादों की तलाश कर रहे हैं। पुराने जमाने की तुलना में लोग विभिन्न प्रकार के रोगों से ग्रस्त हैं। इसलिए लोगों को जागरूक बनाने का सही समय यही है और सहजन जैसी पोषण से समृद्ध सब्जियों का लाभ भी ज्ञात होना चाहिए। सहजन में बीटा कैरोटिन, अमीनो अम्ल और कई प्रकार के फिनॉलिक पाए जाते हैं। सहजन की छाल गोंद बनाने के लिए, जबकि इसके फूलों का प्रयोग हर्बल टॉनिक के रूप में किया जाता है। इसके संपूर्ण वृक्ष का इस्तेमाल औषधीय उपयोग में किया जाता है। सहजन मुख्य रूप से अफगानिस्तान, उपहिमालयी क्षेत्र, बांग्लादेश, भारत और पाकिस्तान में पाया जाता है। इसके पत्ते, फूल, फलियां, बीज व छाल का किसी न किसी रूप में उपयोग होता है। सहजन के पत्ते एवं फलियां शरीर को ऊर्जा देने के साथ-साथ शरीर में उपस्थित विषैले तत्वों को निकालने का काम करते हैं। भारत में सहजन का उपयोग दक्षिण भारत में अधिकता से सांभर एवं सब्जी के रूप में किया जाता है। दक्षिण भारत में वर्षभर फली देने वाले सहजन के पेड़ होते हैं। उत्तर भारत में यह वर्ष में एक बार ही फलियां देता है। सहजन में पोषक तत्वों

कीटों से हानि

आंगन में अत्यंत सहजता से सहजन पेड़ को उगाया जा सकता है। इसके वृक्ष पर कई प्रकार के कीटों का आक्रमण होता है। लगभग 73 प्रकार के कीट एवं 5 प्रकार के अष्टपदी कीट, सहजन पर आक्रमण करते हैं। इनमें से प्रमुख हैं बल्कल भोजी सूंडी, इंडार्बेला क्वाड्रीनोटाटा, अन्य सूंडियां जैसे-यूपटेरोट मोलिफेरा एवं नूरडा, कलियों को खाने वाला कीट, *नूरडा मोरिंगी*, तनाबेधक, *इंडार्बेला टेट्राओनिस, डाइयाजेनोप्सिसऐपोमेसीनोइडिस* एवं *बैटोसेरा रुबास*, राख रंग के वीविल,माइलोसेरास *विरिदैनास, मालोसेरास* डिस्कालार, काला मांहू, *एफिस क्रैकसीभोरा*, पत्ती खादक सूंडी, *टेट्रागोनिया सिभा, मेटानास्ट्रिया हीरटाका*, रस चूसने वाली मच्छरनुमा बग,*हेलोपेल्टिस ऐन्टोनी*, कलियों में छेद करने वाली मक्खी, *स्टीक्टोडिप्लोसिस मोरिंगी*, शल्क कीट, *डाइऐस्पीडिओटास* तथा *सेरोप्लास्टोडेस काजानी* इत्यादि। माहूं, फलों से रस चूसकर उसे सुखा देता है। दीमक भी सहजन का एक शत्रु है तथा वर्तमान में फल मक्खी, गिटोना डिस्टिग्मा इसके सर्वाधिक हानिकारक कीट के रूप में उभर कर आए हैं। बरसात के मौसम में इस पर अधिक आक्रमण देखा गया है। दक्षिण भारत में यह एक प्रमुख कीट माना गया है, जो खराब देखरेख में उगाये जाने वाली फसल में 70 प्रतिशत तक नुकसान पहुंचाता है।

सारणी 3. सहजन में कीट प्रबंधन

कीट	लक्षण	प्रबंधन
फूल खाने वाले कीट		
बड कीट	लार्वा फूल में पनपता है तथा फूल झड़ने लगते हैं	पेड़ की जड़ों के आसपास खुदाई करके प्यूपा को मारने का प्रयास करें। क्षतिग्रस्त फूलों एवं कलियों को नष्ट करें तथा प्रकाश प्रपंच का प्रयोग करें। डस्ट कार्बेरिल 10 डी/25 कि.ग्रा./हैक्टर या स्प्रे कार्बेरिल 50 डब्ल्यूपी/2 ग्राम/लीटर का प्रयोग करें।
बड मिडेज	लार्वा फूल के मध्य भाग को खाता है तथा फूल झड़ने लगते हैं	
पत्ती खाने वाले कीट		
पत्ती कैटरपिलर	गंभीर प्रकोप के कारण किलन	पेड़ की जड़ों के आसपास खुदाई कर रेशमी जाल को इकट्ठा कर नष्ट करें। मकड़ी व चिड़िया प्राकृतिक नियंत्रक के रूप में कार्य करते हैं। अगर प्रकोप अधिक है तो कीटनाशी का प्रयोग करें।
बालों वाली इल्ली	इन्हें पेड़ के तनों में समूह में देखा जा सकता है। पत्तों में प्रकोप के कारण किलन होता है।	इल्ली के अंडे व कैटरपिलर इकट्ठा कर नष्ट करें। प्रकाश प्रपंच का प्रयोग करें। अगर प्रकोप अधिक है तो कीटनाशी का प्रयोग करें।
फल वाले कीट		
फल मक्खी	मैगेट फल मक्खी के प्रकोप से फलों के सूखने का कारण बनता है	मृदा में थायामेथोक्सम 25 डब्ल्यूजी/200 एआई/हैक्टर की दर से बुआई के 150, 180 व 210 दिनों के अंतराल पर प्रयोग करें। किण्वित टमाटर फल प्रपंच/25/हैक्टर की दर से लगाएं।

सारणी 4. सहजन के विभिन्न भागों के औषधीय गुण

सहजन के विभिन्न भाग	औषधीय गुण
बीज	पीड़ानाशक, एलर्जीनाशक, जीवाणुरोधी, मूत्रवर्धक औषधि, विषाणुरोधी
बीज कर्नल	दमारोधी, जलन या प्रदाहात्मकरोधी
फली एवं बीज	रक्त चाप नियंत्रक
पत्ती	अल्सररोधी, अतिगलग्रन्थिता, फंगसरोधी, मधुमेहरोधी, आदि
जड़	कैंसररोधी, प्रदाहकरोधी, पीड़ानाशक
फूल	प्रतिवातौषधि, कैंसररोधी
छाल	पीड़ानाशक, जर्मनाशक
फोलियस	दूध बढ़ाने वाला

सहजन के फूल

सहजन की प्रमुख किस्में

दो प्रकार के सहजन होते हैं: अर्थात बारहमासी और वार्षिक सहजन। बारहमासी सहजन की किस्में हैं-मुलनूर मोरिंगा, वाल्यापट्टी मोरिंगा, चवकाचेरी मोरिंगा, चेमुरुंगाई, जाफना, कत्तूमुरंगाई, कोडीकलमुरंगी, पालमुरुंगई, पुनमुरुंगाई और पलमडू मोरिंगा। सहजन, बारहमासी फसलों की एक विस्तृत श्रृंखला के साथ एक मिश्रित फसल के रूप में विकसित करने के लिए भी उपयुक्त है। बारहमासी सहजन की वार्षिक सहजन की तुलना में कुछ सीमाएं हैं, जैसे कि समय से पूर्व फल धारण अवधि, रोपण सामग्री की अनुपलब्धता, कीटों और रोगों का प्रकोप आदि। वार्षिक सहजन की उन्नत किस्में पीकेएम-1 और पीकेएम-2, के.एम.-1 और धनराज हैं। इसका रोपण सामान्य रूप से बारिश की पहली बौछार के बाद जून के दौरान किया जाता है। इसके 25-60 दिनों के अंकुर रोपण के लिए चुने जाते हैं या रोपण सीधे बीज के माध्यम से किया जाता है। दो बीज प्रत्येक गड्ढे में लगाए जाते हैं।

जैसे-प्रोटीन, आयरन, बीटा कैरोटीन, अमीनो अम्ल, कैल्शियम, पोटेशियम, मैग्नीशियम, विटीमिन 'ए', 'सी' और बी कॉम्प्लेक्स की अधिकता होने के कारण इसका कुपोषण को रोकने एवं इलाज में प्रयोग किया जाता है। इसके बीज से लगभग 38-40 फीसदी नहीं सूखने वाला तेल बनता है, जिसे बेन तेल के नाम से जाना जाता है। इसका तेल साफ, मीठा और गंधहीन होता है और कभी खराब नहीं होता है। इन्हीं गुणों के कारण इसका इस्तेमाल इत्र बनाने में भी किया जाता है।

पोषण से भरपूर सहजन

- सहजन में पोटेशियम की मात्रा अधिक होती है। अत: यह उच्च रक्तचाप को रोकने में सहायक होता है। अन्य हरी

सहजन की पत्तियां

पोषण का खजाना

सहजन में विटामिन 'सी'-संतरे से सात गुना, विटामिन 'ए'-गाजर से चार गुना, कैल्शियम-दूध से चार गुना व प्रोटीन-दही की तुलना में तीन गुना ज्यादा पाया जाता है। इसका उपयोग वात व उदरशूल, नेत्ररोग, मोच, शियाटिका, गठिया, दमा, जलोधर, पथरी, प्लीहा आदि रोगों के लिए श्रेयष्कर है।

सारणी 5. सहजन की पत्तियां, पत्ती पाउडर, बीज और फली के पोषक तत्व (100 ग्राम खाद्य भाग में)

पोषक तत्व	ताजा पत्ते	सूखी पत्तियां	पत्ता पाउडर	बीज	फलियां
कैलोरी	92	329	205	–	26
प्रोटीन (ग्राम)	6.7	29.4	27.14	35.97	2.5
वसा (ग्राम)	1.7	5.2	2.3	38.67	0.1
कार्बोहाइड्रेट (ग्राम)	12.5	41.2	38.2	8.67	3.7
रेशा (ग्राम)	0.9	12.5	19.2	2.87	4.8
विटामिन बी$_1$ (मि.ग्रा.)	0.06	2.02	2.64	0.05	0.05
विटामिन बी$_2$ (मि.ग्रा.)	0.05	21.3	20.5	0.06	0.07
विटामिन बी$_3$ (मि.ग्रा.)	0.8	7.6	8.2	0.2	0.2
विटामिन सी (मि.ग्रा.)	220	15.8	17.3	4.5	120
विटामिन ई (मि.ग्रा.)	448	10.8	113	751.67	.
कैल्शियम (मि.ग्रा.)	442	2185	2003	45	30
मैग्नीशियम (मि.ग्रा.)	42	448	368	635	24
फॉस्फोरस (मि.ग्रा.)	70	252	204	75	110
पोटेशियम (मि.ग्रा.)	259	1236	1324	–	259
कॉपर (मि.ग्रा.)	0.07	0.49	0.57	5.20	3.1
लौह तत्व (मि.ग्रा.)	0.85	25.6	28.2	–	5.3
सल्फर (मि.ग्रा.)	–	–	870	0.05	137

सब्जियों की तरह ही इसमें पोटेशियम, विटामिन व खनिज भरपूर मात्रा में पाये जाते हैं। इसमें केले के मुकाबले तीन गुना अधिक पोटेशियम पाया जाता है। इसे अपने आहार में शामिल करना अच्छा विकल्प है।

- इसकी फली से बनी सब्जियां खाने से या फिर इसके बीज का तेल त्वचा पर लगाने से त्वचा की चमक हमेशा बरकरार रहती है। इसमें विटामिन 'ई' प्रचुर मात्रा में पाया जाता है। विटामिन 'ई' त्वचा की सुंदरता को बनाये रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
- इसमें मौजूद आइसोथियोसाइनेट्स प्रभावी रूप से पाचन तंत्र की विभिन्न समस्याओं जैसे अल्सर और कब्ज का इलाज करने में उपयोगी होते हैं। यह दवा की दुकान पर मिलने वाली एंटीएसिड दवाइयों का एक बेहतर हर्बल विकल्प है।
- इसमें एंटीबायोटिक और एंटीबैक्टीरियल गुण होते हैं, जो हेलीकोबैक्टर पिलोरी और कोलिफोर्म बैक्टीरिया जैसे दस्त के कारक रोगजनकों के विकास को रोकते हैं और दस्त जैसी अन्य समस्याओं को कम करते हैं।
- सहजन में सूजन और दर्द को कम करने वाले गुण होते हैं, जिनकी वजह से यह शरीर में विभिन्न प्रकार के दर्द से राहत दिलाने में मदद करता है। यह गठिया, जोड़ों का दर्द, माइग्रेन और सिरदर्द जैसी अन्य समस्याओं के इलाज में लाभकारी होता है।
- सहजन पेट की समस्याओं के लिए कारगर है। यह हल्का रेचक है, अतः पेट साफ करता है। फाइबर की वजह से यह कब्ज दूर करता है, पेट के कीट और जीवाणुओं से भी यह मुक्ति दिलाता है।
- सहजन की जड़ में उत्कृष्ट पोषक तत्व पाये जाते हैं। इसमें फाइटोकैमिकल कंपाउंड एवं एल्केनॉयड पाया जाता है। इसकी जड़ कैंसररोधी, प्रदाहकरोधी, पीड़ानाशक होती है।
- इसके एंटीऑक्सीडेंट शरीर की कोशिकाओं की मरम्मत करते हैं। औषधीय गुणों से भरपूर सहजन एनर्जी की कमी पूरी करता है और जल्दी थकान नहीं होने देता। इसमें पाए जाने वाले बेहतरीन अमीनो अम्ल नए ऊतक (टिश्यू) बनाते हैं, अतः यह शरीर के विकास के लिए लाभदायक है।
- यह स्वास्थ्य लाभ के अतिरिक्त पानी को साफ करने में भी कारगर है, जिसका सदियों से प्रयोग होता रहा है। इसके बीजों को कूटकर पानी में मिलाने से हानिकारक शैवाल और प्रदूषक तत्व अलग हो जाते हैं।

रोकथाम

संतरे में समन्वित कीट एवं रोग प्रबंधन

हरीश वर्मा*, **शशि कुमार बैरवा**** और **अरविन्द नागर*****

कई वर्षों से पर्यावरण में हो रहे लगातार परिवर्तन के परिणामस्वरूप हाड़ौती अंचल में कृषि उद्यानिकी परिस्थितियों की वजह से संतरे के बगीचों में बहुत परिवर्तन नजर आ रहे हैं। गत वर्षों में औसत वर्षा में हुए बदलाव से बगीचों में फूलों का न आना, फूलों एवं फलों का परिपक्वन अवस्था से पहले गिरना, फलों के फटने के साथ ही विभिन्न कीटों एवं रोगों का आक्रमण भी अधिक दिखाई देने लगा है।

संतरे के बगीचे लगाने के बाद इससे संबंधित वैज्ञानिक तकनीकी जानकारियों के अभाव में किसानों को बहुत नुकसान उठाना पड़ रहा है। इन तकनीकों में कीट एवं रोगों का समन्वित प्रबंधन नहीं करना भी एक महत्वपूर्ण घटक है। इसकी वजह से संतरों की उत्पादकता एवं गुणवत्ता भी प्रभावित हो रही है।

प्रमुख कीट एवं प्रबंधन

नीबू की तितली

यह एक तितली है, जिसकी इल्लियां संतरे व नीबूवर्गीय पौधों की केवल बीच की शिरा को छोड़कर सम्पूर्ण पत्ती को खा जाती हैं। इसकी लटें प्रारंभ में चिड़ियों की बीट की तरह दिखाई देती हैं, परंतु बाद में पत्ती के समान हरे रंग की हो जाती हैं। सूंडियां अंडों से निकलने के तुरन्त बाद पत्तियों को खाने लगती हैं तथा नुकसान पहुंचाती हैं। इसकी लटें विशेषकर नर्सरी वाले पौधों में बहुतायत में मिलती हैं और जुलाई-फरवरी तक छोटे पौधों को क्षति पहुंचाती हैं। यह कीट नीबूवर्गीय बगीचों में वर्षपर्यन्त नुकसान पहुंचाता है और जुलाई-अगस्त में अधिक सक्रिय रहता है।

प्रबंधन

वृक्षों की संख्या अधिक नहीं हो तो, लटों को हाथों से चुनकर कीटनाशी मिले पानी में डालकर मार देना चाहिये। कीट की रोकथाम के लिए नीम का तेल 3.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। परजीवी लार्वा *ऐपेन्टेलिस फ्लेवियेस* व *मेलालोफेचरोप्स स्पिशीज* तथा *चैलसिड* व *इच्न्यूमोनिड* परजीवी हैं। अंड परजीवी *ट्राइकोग्रामा किलोनिस* रिलीज करना भी प्रभावी होता है। क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 2.0 मि.ली. या क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी. 3.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें।

ताजे संतरे

छाल भक्षक कीट

बगीचे की देखरेख के अभाव में इस कीट का प्रकोप अधिक होता है और मानसून के साथ ही यह सक्रिय हो जाता है। इसकी लटें तने में सुरंग बनाकर छिलके को खाती हैं। लटों द्वारा तने में छेद करने से चाय की पत्ती जैसी विष्ठा एकत्र हो जाती है, जो इसकी पहचान का विशिष्ट लक्षण है। प्रभावित पौधों का उत्पादन कम होने के साथ उम्र भी घट जाती है।

प्रबंधन

पेड़ में स्थित सुरंग को लचीले तार से

*प्रोफेसर (कीट विज्ञान); ***विषय विशेषज्ञ (उद्यान विज्ञान) कृषि विज्ञान केंन्द्र, झालावाड़ (राजस्थान); **सहायक प्रोफेसर (उद्यान विज्ञान), कृषि महाविद्यालय, लालसोट, दौसा-303511 (राजस्थान)

रोगों एवं कीटों से बचाव है जरूरी

साफ कर उसमें क्विनालफॉस 25 ई.सी. या प्रोफेनाफॉस 50 ई.सी. 3-5 मि.ली. डालकर, रुई के फोहों को भिगोकर सुरंग में डालकर चिकनी मिट्टी से बंद कर दें। लार्वा तथा तना अवशेषों को साफ करने के लिए क्विनालफॉस 25 ई.सी. या प्रोफेनाफॉस 50 ई.सी. कीटनाशक दवा का 2.0 मि.ली. प्रति लीटर का घोल बनाकर छिड़काव करें।

पर्ण सुरंगक कीट

यह कीट नर्सरी व बगीचों दोनों ही स्थिति में नुकसान पहुंचाता है। पर्ण सुरंगक प्रकाश संश्लेषण की क्रिया को बाधित करते हैं। इस कीट का प्रकोप मार्च व सितंबर में अधिक रहता है। इसका लार्वा पत्ती की सतह के अंदर टेढ़ी-मेढ़ी सुरंग बनाता है, जो चांदी के रंग की तरह चमकती दिखाई देती है। प्रभावित पत्तियां किनारों से अंदर की तरफ मुड़ जाती हैं, जिससे नई बढ़वार काफी प्रभावित होती है। हल्के पीले रंग की लट सतह में सुरंग बनाकर चलती है। यह कीट मिलीबग नामक कीट को फैलाने में भी सहायक है।

प्रबंधन

अधिक प्रकोप दिखाई देने पर कटाई-छंटाई कर नई बढ़वार पर कीटनाशकों का छिड़काव करें। बगीचे की नियमित देखभाल करनी चाहिए। शुरूआती अवस्था में प्रकोप नजर आने पर नीम के तेल का 3.0 मि.ली. प्रति लीटर घोल बनाकर छिड़काव करें। अधिक प्रकोप होने पर क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 2 मि.ली. या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 0.3 मि.ली. या डाइमिथोएट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. या स्पाइनोसेड 0.35 मि.ली. या नोवाल्यूरॉन 0.85 मि.ली. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर छिड़काव करें।

काली मक्खी (काली मस्सी/काल्शी/काली मस्ती)

यह बहुत ही हानिकारक काले रंग का सफेद मक्खी जैसा सूक्ष्म कीट है, जो नये व पुराने सभी पौधों को नुकसान पहुंचाता है। इसके प्यूपा के चारों ओर सफेद किनारी व काले बाल पाये जाने के कारण इसको आसानी से पहचाना जा सकता है। काली मक्खी की निम्फ व वयस्क अवस्था पत्तियों की निचली सतह से रस चूसकर नुकसान पहुंचाती है। नई फुटान वाली कोंपल एवं पत्तियों पर पीले रंग के अंडे (हजारों की संख्या में) व वयस्क पाये जाते हैं। ये कीट चिपचिपा पदार्थ छोड़ते हैं, जिसके फलस्वरूप वहां पर कैप्नोडियम नामक काली फफूंद की परत पौधों के संक्रमित हिस्सों पर जम जाती है। इस कीट की वर्ष में तीन पीढ़ियां पायी जाती हैं। वातावरण में आर्द्रता अधिक होने पर काली फफूंद तीव्र गति से बढ़ती है, जिससे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया बाधित होती है और पौधे की बढ़वार रुक जाती है और उत्पादन में गिरावट आ जाती है।

काली मक्खी से ग्रसित बगीचा

प्रबंधन

ये प्रारंभ में नई पत्तियों पर अंडे देते हैं और अंडों से 50 प्रतिशत निम्फ बनते हैं। यह स्थिति सामान्यत: जुलाई के दूसरे तथा दिसंबर व अप्रैल के प्रथम सप्ताह में आती है। इस समय पर 15 दिनों के अंतराल पर दो बार क्यूनॉलफॉस 25 ई.सी. 2.0 मि.ली. या डायमिथोएट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. या ट्राइजोफॉस 40 ई.सी. 2.0 मि.ली. या प्रोफेनाफॉस 50 ई.सी. 2.0 मि.ली. प्रति लीटर की दर से घोल बनाकर छिड़काव शक्तिचालित

काली मक्खी रोग के बारे में किसानों को जानकारी देते हुए

फल चूसक पतंगा

यह कीट रात्रि में पेड़ पर आक्रमण करती है और दिन के समय छिपा रहता है। फल चूसक पतंगा फलों में सुराख करके रस चूसता है, जिससे संक्रमित भाग पीला पड़ जाता है और गुणवत्ता में कमी आ जाती है। फलों में छिद्र होना एवं उसके चारों ओर फल गोलाई में गला हुआ पाया जाता है। इन लक्षणों के आधार पर इसकी पहचान की जा सकती है।

प्रबंधन

जमीन पर गिरे हुये फलों को इकट्ठा कर भूमि में दबा दें। बगीचे की साफ-सफाई का विशेष ध्यान रखें। बगीचे के चारों तरफ कीट परपोषी पौधों को नष्ट कर देना चाहिए। इस पतंगे को आकर्षित करने के लिए प्रकाश प्रपंच का प्रयोग करें। फल परिपक्वता के एक महीने पहले से रात्रि को 7-11 बजे तक लाइट ट्रैप जलाना चाहिए। इससे पतंगे इनकी तरफ आकर्षित होते हैं और आसानी से इनको नष्ट किया जा सकता है। देर रात्रि को हरी घास, गोबर के उपलों व नीम की पत्तियों को साथ जलाकर धुंआ करना चाहिए। जहां इस कीट का प्रकोप अधिक हो वहां पर अम्बे बहार की फसल नहीं लें। विष चुग्गा (मेलाथियान 50 ई.सी. 10 मि.ली. व 100 ग्राम गुड़ का 1 लीटर पानी में घोल बनाकर) वृक्षों के बीच सितंबर-अक्टूबर में लटका दें। पौधों के चारों ओर उगे हुए खरपतवारों पर मेलाथियान 50 ई.सी. या डाईमिथोइट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. या नीम का तेल 3.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

स्प्रेयर की सहायता से इस प्रकार करें, जिससे घोल पत्तियों की निचली सतह तक पहुंच जाये। वर्षा ऋतु में या इसके 15 दिनों बाद अन्य कीटनाशी या नीम के तेल का 3.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। कैप्नोडियम (काली फफूंद/कजली रोग) से बचाव के लिए 2 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. अथवा 3 ग्राम कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यू.पी. प्रति लीटर घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए। पानी भराव तथा अधिक नाइट्रोजन से बचें। अतिप्रभावित शाखाओं को काटकर नष्ट कर दें। प्रायोगिक तौर पर यह पाया गया कि किसानों द्वारा सामूहिक प्रयास करने पर इस कीट की रोकथाम आसानी से हो सकती है। वर्ष में 3 बार छिड़काव का ध्यान रखने के लिए 4, 8, 12 फार्मूला याद रखें यानी कि अप्रैल, अगस्त, दिसंबर में छिड़काव करना लाभदायक है।

मिलीबग कीट

यह कीट नर्सरी व बढ़ते पौधों को अत्यधिक नुकसान पहुंचाता है। इसका आक्रमण बसंत तथा पतझड़ के मौसम में अधिक होता है, जिससे पत्तियां एवं मुलायम प्ररोह मुड़कर गांठनुमा व कुंडलीनुमा बन जाते हैं। मिलीबग कीट के ऊपर सफेद परत चढ़ी रहती है। यह कीट रस चूसकर पौधों की उत्पादन क्षमता को कम कर देता है। मिलीबग शहदनुमा चिपचिपा पदार्थ स्रावित करता है, जिसके फलस्वरूप काली फफूंद पैदा हो जाती है।

प्रबंधन

निम्फ तथा वयस्क परजीवी *लेप्टोमेसट्रिक डेक्टाइलोपिई* तथा परजीव भक्षी *क्राइसोपिड* व *कोकसिनेलिड* का उपयोग करें। डाईमिथोएट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. या मैलाथियान 50 ई.सी. 2.0 मि.ली/लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें। पेड़ के तने के चारों तरफ मिट्टी में क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत या क्लोराफयारीफॉस 4 प्रतिशत चूर्ण मिलायें।

थ्रिप्स कीट से प्रकोपित फल

पोषक गुणों से भरपूर है संतरा

फल मक्खी कीट

फल पकने के बाद पेड़ पर अधिक समय तक रहने से इस कीट का प्रकोप बढ़ने की आशंका रहती है। फल मक्खी का प्रकोप अम्बे बहार में ही देखने को मिलता है, जबकि मृग बहार में यह प्रकोप नहीं होता है। मृग बहार के फलों के पकने के समय फल मक्खी निष्क्रिय अवस्था में चली जाती है। फल मक्खी कीट विशेषकर मानसून के समय पर अधिक सक्रिय रहता है। कीट का मैगट फलों के गूदे को खाकर नुकसान पहुंचाता है। मादा मक्खी फलों में छेद करके अंडे देती हैं। लटें फल के अंदर गूदा खाती हैं। फलों में फफूंद तथा जीवाणु संक्रमण होकर फल सड़ने लगते हैं। परिणामस्वरूप फलों की गुणवत्ता में गिरावट आने से आय में नुकसान होता है।

प्रबंधन

संक्रमित फलों को एकत्र कर जमीन में दबा दें। मैलाथियान 50 ई.सी. 0.05 प्रतिशत व शक्कर एक प्रतिशत विषयुक्त घोल फल पकने से 2 माह पूर्व 10 दिनों के अंतराल में बगीचे में जगह-जगह पेड़ पर टांग दें। नर फलमक्खी को आकर्षित कर उलझाकर एवं फंसाकर मारने के लिए फल मक्खी ट्रैप, जिसमें मिथाईल यूजीनॉल 0.1 प्रतिशत तथा 0.05 प्रतिशत मेलाथियान का घोल हो, 20-25 ट्रैप प्रति हैक्टर की दर से फल तुड़ाई से 60 दिनों पूर्व लगायें। ट्रैप में 7 दिनों के अंतराल से ताजा घोल बदलते रहें। बाजार में उपलब्ध तैयार फल मक्खी ट्रैप भी उपयोग में लिए जा सकते हैं, जिनमें ल्योर को 35 से 40 दिनों में बदलना पड़ता है। वृक्षों के नीचे तने के चारों तरफ गहरी गुड़ाई करें और क्यूनालफॉस 1.5 प्रतिशत या मैलाथियान 5 प्रतिशत चूर्ण 50 ग्राम प्रति पेड़ जमीन में मिलायें ताकि जमीन में छुपे प्यूपा का भी नियंत्रण हो सके।

मोयला कीट

वयस्क भूरे रंग का होता है। इस कीट के निम्फ एवं वयस्क दोनों ही नवीन पत्तियों एवं प्ररोहों से रस चूसकर नुकसान पहुंचाते हैं। भूरा व काला रंग का मोयला कीट मुख्य रूप से संतरे के बगीचे में नुकसान पहुंचाता है। इसका प्रकोप पौधों पर दिसंबर से मार्च में अधिक होता है। आसमान में बादल छाये रहने पर इनकी संख्या तेजी से बढ़ती है। इससे प्रभावित पत्तियां ऊपर की ओर मुड़ जाती हैं, प्ररोह व पौधों की वृद्धि रुक जाती है। मोयला कीट पौधों के कोमल भागों से रस चूसने के साथ ही सिट्रस ट्रिसटेजा नामक वायरस को फैलाने का काम भी करता है।

प्रबंधन

नियंत्रण के लिए नीम का तेल 3 मि.ली. प्रति लीटर पानी के साथ छिड़काव भी प्रभावी

माइट कीट से ग्रसित पत्तियां

रहता है। परजीवी कीट जैसे- *लियोलेक्सिस स्कूटेलैरिस* तथा परभक्षी जैसे *काईसोपिड, कोक्सिनेलिडस, सिरफिडस* का उपयोग कर जैविक नियंत्रण किया जा सकता है। क्यूनालफॉस 25 ई.सी. 2.0 मि.ली. या डाइमिथोएट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 0.50-1.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें।

रस्ट माइट

ये कीट फलों के बाहरी छिलके से रस चूसते हैं, जिससे छिलका लाल-भूरे से बैंगनी रंग का हो जाता है।

प्रबंधन

रस्ट माइट के प्राकृतिक शत्रु व परभक्षी *एजिस्टेअस स्पीशीज* तथा *एम्बीलेसिसस हिबिस्की* भी इस कीट को नियंत्रित करते हैं। गर्मी के मौसम में पानी की कमी होने पर इसका प्रभाव अधिक होता है। नियमित अंतराल पर सिंचाई करें या डाईकोफॉल 18.5 ई.सी. की 2.0 मि.ली. या मिथाइल डेमेटोन 25 ई.सी. 2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें एवं आवश्यकता पड़ने पर पुनः दोहरायें।

चौड़ी माइट

इस कीट से प्रभावित फलों का छिलका चांदी के रंग का होकर फिर कॉर्क जैसा हो जाता है। कॉर्क से हो चुके छिलके की पपड़ी खुरचने पर उतर जाती है।

प्रबंधन

नियंत्रण के लिए डाईकोफॉल 18.5 ई.सी. 2.0 मि.ली. या मिथाइल डेमेटोन 25 ई.सी. 2.0 मि.ली. का प्रति लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें एवं आवश्यकता होने पर पुनः दोहरायें।

फलों से लदा संतरा वृक्ष

सिट्रस सिल्ला

इस कीट के निम्फ तथा वयस्क 10-100 के झुंड में रहकर नई फुटान, पत्तियों तथा फूल कलिका से रस चूसकर नुकसान पहुंचाते हैं। ये निम्फ शहद जैसा पदार्थ उत्सर्जित करते हैं, इस पर शूटी मोल्ड विकसित हो जाती है। इसके साथ ही यह ग्रीनिंग नामक रोग के रोगकारक को फैलाने में भी सहयोग करता है।

प्रबंधन

इस कीट की रोकथाम के लिए मार्च-अप्रैल तथा जून-जुलाई उपयुक्त हैं। कीट नियंत्रण के लिए डाईमिथोएट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. या इमिडाक्लोप्रिड 17.8 एस.एल. 0.5-1.0 मि.ली. या मिथाइल डेमेटोन 25 ई.सी. 2.0 मि.ली. या प्रोफेनोफॉस 50 ई.सी. 2.0 मि.ली. प्रति लीटर पानी में घोलकर छिड़काव करें। आवश्यकता होने पर 15 दिनों बाद पुनः छिड़काव दोहरायें।

प्रमुख रोग एवं प्रबंधन

गोदिया

यह रोग *फाइटोफ्थोरा* नामक कवक द्वारा होता है। गोदिया का फैलाव अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में ज्यादा होता है। इस रोग के कारण तने व टहनियों के रोगग्रस्त भाग से गोंद जैसा पदार्थ छाल पर उभरे हुए घाव के रूप में देखा जा सकता है। इसकी वजह से छाल सूखकर फट जाती है और अंत में पेड़ सूखने की स्थिति में आ जाता है। गोदिया रोग सहनशील मूलवृन्त में जड़ गलन के रूप में भी होता है। यह रोग संतरों में पौधों की छोटी अवस्था में 1-2 वर्ष तक जड़ गलन के रूप में भी होता है।

प्रबंधन

रोगग्रस्त छाल को हटाकर बोर्डेक्स पेस्ट का प्रयोग करना चाहिए। इस कार्य के लिए कॉपर सल्फेट की 100 ग्राम मात्रा को 750 मि.ली. पानी में घोलना चाहिए। इसके साथ ही बिना बुझे चूने की 150 ग्राम मात्रा 750 मि.ली. पानी में घोलनी चाहिए। दोनों घोलों को एक में मिलाकर (कुल घोल 1.5 लीटर) प्रयोग किया जा सकता है या मेटालेक्सिल + मेन्कोजेब (रिडोमिल एम.जेड. 72 डब्ल्यू.पी.) की 20 ग्राम मात्रा एक लीटर अलसी के तेल में घोल बनाकर छिले हुए भाग पर लेपकर दें। इसके साथ ही मेटालेक्सिल 4 प्रतिशत + मेन्कोजेब 64 प्रतिशत (68 डब्ल्यू.पी.) या

संतरे के बगीचे में बोर्डो पेस्ट की जानकारी देते हुए

कज्जली रोग

यह कवकजनित रोग है। कज्जली रोग *कैप्नोडियम सिट्राई* नामक कवक द्वारा होता है। इस रोग में पत्तियों, शाखाओं और कभी-कभी फलों पर भी एक काजल के समान काली परत बन जाती है। कज्जली रोग का मूल कारण काली मक्खी, माहूं और स्केल कीटों का पौधों पर आक्रमण होने से होता है। फफूंद कीटों द्वारा स्रावित मीठे शहद जैसे पदार्थ पर पनपती है। चींटियां फफूंद को फैलाने में सहायक होती हैं। यह रोग प्रत्यक्ष रूप से हानि नहीं पहुंचाता है, लेकिन पौधों को मिलने वाले सूर्य के प्रकाश को रोक देता है। इससे प्रकाश संश्लेषण की प्रकिया बाधित हो जाती है। इसके कारण पौधा ओजविहीन होकर बौना रह जाता है और फलों का आकार भी छोटा रह जाता है।

प्रबंधन

रस चूसक कीटों के प्रबंधन में ऊपर बताए हुए कीटनाशक छिड़काव करें। शूटी मोल्ड (काली फफूंद/कज्जली रोग) से बचाव के लिए 20 ग्राम स्टार्च प्रति लीटर पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करें। एक सप्ताह बाद कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. 2.0 ग्राम प्रति लीटर पानी में घोल कर छिड़काव करें। आसपास के बगीचों का कृषक सामूहिक रूप से मिलकर प्रबंधन करेंगे तब ही लाभदायक रहेगा।

संतरे का बाग

रिडोमिल एम.जेड. 72 डब्ल्यू.पी. 25 ग्राम प्रति पौधे की दर से 40-45 लीटर पानी में घोल बनाकर पौधे के थालों में प्रयोग करें या रोग के नियंत्रण के लिए बोर्डो रंजक का भी उपयोग किया जा सकता है। इसके लिए 100 ग्राम नीला थोथा व 200 ग्राम बुझा हुआ चूना प्रयोग किया जाता है। इन दोनों रसायनों को आपस में मिला दिया जाता है। अब इसे 300 ग्राम अलसी के तेल में उबालने के बाद ठंडा कर उक्त दोनों रसायनों को मिला देते हैं। यह तना रंगने में प्रयोग किया जाता है। बाग में पानी का प्रबंध इस प्रकार करें कि पानी तने के सीधे सम्पर्क में न आये तथा रोगग्रसित पौधे का पानी स्वस्थ पौधे में न जाये।

कैंकर रोग

यह वर्षा ऋतु में होने वाला सबसे गंभीर रोग है। कैंकर रोग *जैन्थोमोनास कॉम्पेसिट्रस वार.* सिट्राई नामक जीवाणु द्वारा होता है। इस रोग का प्रभाव पौधे के सभी भागों जैसे-पत्तियों, प्ररोह, फूल तथा फल पर होता है। कैंकर रोग में हल्के पीले दाग, पत्तियों पर दिखाई पड़ते हैं, जो बाद में भूरे रंग में बदल जाते हैं। व पत्ते खुरदरे हो जाते हैं। ये धब्बे पहले पत्तियों की निचली सतह तथा बाद में ऊपरी सतह पर दिखाई देते हैं। जैसे-जैसे रोग बढ़ता है, धब्बों की ऊपरी सतह सफेद या मटमैली व अंत में मध्य से फटकर खुरदरी व छेदनुमा दिखाई देती है। धब्बे पीले रंग के आभामडंल से घिरे रहते हैं। धब्बे पर्णवृंत पर होने पर पत्तियां झड़ जाती हैं। फलों पर धब्बे गहरे नहीं होकर ऊपरी छाल में ही होते हैं। धब्बेयुक्त फलों का बाजार मूल्य कम हो जाता है।

प्रबंधन

रोगग्रसित पेड़ों की गिरी हुई पत्तियों या फलों को एकत्रित करके नष्ट कर देना चाहिए। रोगी शाखाओं को काटकर जला देना चाहिए तथा बोर्डो मिश्रण (5:5:50) प्रतिशत का घोल या 0.3 प्रतिशत ब्लाइटॉक्स 50 का छिड़काव 2-3 बार 15 दिनों के अंतराल पर करना चाहिए। *स्ट्रेप्टोमाइसिन* या *फाइटोमाइसिन* या एग्रोमाइसिन 1.0 ग्राम मात्रा को 5 लीटर पानी में घोलकर 15 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार छिड़काव करना चाहिए।

उल्टा सूखा रोग

इस रोग में पौधे की शाखायें ऊपर से नीचे की तरफ सूखने लगती हैं। पहले छोटी टहनियां सूखना शुरू होती हैं। धीरे-धीरे मोटी टहनियां भी सूखने लगती हैं। अंत में पूरा पौधा सूख जाता है। इस रोग के प्रमुख कारक निम्न प्रकार से हैं:

- सिंचाई व जल निकास का उचित प्रबंधन नहीं होना।
- पोषक तत्वों तथा भूमि में जीवांश पदार्थों की कमी होना।
- उद्यानों का उचित प्रबंधन नहीं होना तथा कीट-रोगों का अधिक प्रकोप पाया जाना।

प्रबंधन

नियंत्रण के लिए अच्छे जल निकासयुक्त हल्की दोमट मृदा का चुनाव करना चाहिए। पंजीकृत नर्सरी से रोगरोधी मूलवृन्त वाले पौधों का चयन करना चाहिए। फलोद्यान के उत्तम प्रबंधन के लिए समय पर निराई-गुड़ाई, कीट-रोग का नियंत्रण, उचित सिंचाई एवं पोषण प्रबंधन करना चाहिए। प्रति वर्ष पौधों में 25 कि.ग्रा. वर्मीकम्पोस्ट + 2 कि.ग्रा. नीम की खली + 50 ग्राम क्यूनॉलफॉस 1.5 प्रतिशत चूर्ण +25 ग्राम कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. + 50 ग्राम सूक्ष्म तत्वों के मिश्रण को वर्ष में दो बार पौधों के तने के चारों ओर मिट्टी में मिलाकर गुड़ाई कर दें। रोगी भाग की छंटाई के बाद ताम्रयुक्त कवकनाशी (कॉपर ऑक्सीक्लोराइड 50 डब्ल्यू.पी.) 3 ग्राम या मैन्कोजेब (75 डब्ल्यू.पी.) 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के घोल का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार करें। रोगी पेड़ को जड़सहित उखाड़कर नष्ट कर दें। उस स्थान पर नया पौधा लगाने से पूर्व मृदा का उपचार कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. 2 ग्राम प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर करें।

थ्रिप्स कीट

इस कीट के शिशु एवं वयस्क दोनों ही फल, पत्तियों, प्ररोहों तथा विकसित होते फलों का रस चूसकर नुकसान पहुंचाते हैं। पत्तियां कप की आकृति तथा लैदरी (चमड़ानुमा) हो जाती हैं। पत्ती की मध्य शिरा के समानांतर दो सफेद धारियां तथा फल गर्दन पर सफेद रिंग इसके प्रमुख लक्षण हैं। फल पकने पर यह रिंग गर्दन पर एक गड्ढेनुमा निशान बना देती है, जिससे फलों का व्यावसायिक मूल्य कम हो जाता है।

प्रबंधन

इसके नियंत्रण के लिए बगीचों में थ्रिप्स को आकर्षित करने के लिए नीले रंग के चिपचिपे ट्रैप भी लगायें। क्यूनालफॉस 25 ई.सी. या डाईमिथोएट 30 ई.सी. 2.0 मि.ली. प्रति लीटर कलिका फुटान के समय पूरे पेड़ पर छिड़काव करें।

विटामिन 'सी' से भरपूर है संतरा

एंथ्रेक्नोज/विदर-टिप/डाई बैक रोग

यह रोग *कोलेटोट्राइकम ग्लोइयोस्पोरॉइड्स* नामक कवक द्वारा होता है। इसका प्रकोप पत्तियों, शाखाओं व प्ररोह पर होता है। रोगग्रसित पत्तियां टेढ़ी-मेढ़ी हो जाती हैं। रोगी शाखायें शीर्ष से नीचे की ओर सूखकर अंततः संपूर्ण पौधा सूख जाता है।

प्रबंधन

सूखी हुई शाखाओं को काट देना चाहिए एवं काटे हुये सिरों पर बोर्डो पेस्ट अथवा अन्य कॉपरयुक्त कवकनाशी का लेप कर देना चाहिए। पेड़ में यूरिया खाद का संतुलित मात्रा में प्रयोग करना चाहिए। यूरिया का 100 ग्राम प्रति 10 लीटर पानी का घोल बनाकर पौधों का ओज बढ़ाने के लिए छिड़काव करना चाहिए। जल निकास की समुचित व्यवस्था होनी चाहिए एवं बगीचे में सिंचाई का उचित प्रबंधन करना चाहिए। जिंक सल्फेट, कॉपर सल्फेट और चूने का मिश्रण 0.6: 0.2: 0.5 कि.ग्रा. 100 लीटर पानी में मिलाकर प्रयोग करने से रोग का प्रभावी प्रबंधन हो जाता है। रोगी पेड़ पर कार्बेन्डाजिम 50 डब्ल्यू.पी. 0.1 प्रतिशत का घोल बनाकर 15 दिनों के अंतराल पर तीन बार छिड़काव करें। ■

बटन मशरूम उत्पादन से समृद्धि

दीपक राय*, **वीनिका सिंह***, **विवेकानन्द सिंह***,
राकेश कुमार सिंह* और **ए.के. दुबे***

श्री मुकेश कुमार एक प्रगतिशील युवा किसान हैं। इनके द्वारा मशरूम उत्पादन के क्षेत्र में कीर्तिमान स्थापित किया गया है। ये वर्ष 2011 में लखनऊ विश्वविद्यालय से स्नातक की डिग्री प्राप्त करके प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी कर रहे थे कि इसी बीच पिता की आकस्मिक मृत्यु हो गयी। इस कारण परिवार का पूरा बोझ इनके कंधों पर आ गया। इसके परिणामस्वरूप ये परंपरागत खेती करने लगे, जिससे इन्हें अधिक लाभ नहीं होता था। अत: इन्होंने कृषि को लाभकारी बनाने के लिए विभिन्न नवोन्मेषी प्रयोग किए परंतु सफलता प्राप्त नहीं हुई। इसी क्रम में इन्होंने वर्ष 2015 में कृषि विज्ञान केंद्र, भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ से संपर्क स्थापित किया। केंद्र द्वारा इन्हें कृषि के विभिन्न आयामों के बारे में जानकारी दी गयी। इसके साथ ही कृषि से जुड़े अन्य उद्यमों के बारे में भी इन्हें विस्तार से बताया गया।

कृषि विज्ञान केन्द्र, लखनऊ के प्रशिक्षण कार्यक्रमों से मधुमक्खी पालन, मशरूम उत्पादन, वर्मीकंपोस्टिंग, पौध उत्पादन, फलों एवं सब्जियों का प्रसंस्करण आदि विषयों के बारे में श्री मुकेश कुमार को काफी जानकारी हासिल हुई। इसके बाद श्री मुकेश कुमार, (ग्राम अमेठी (रामबाग), ब्लॉक गोसाईगंज, जनपद लखनऊ) ने मशरूम उत्पादन करने का मन बनाया और इसके लिए वर्ष 2016 में आपने कृषि विज्ञान केंद्र, लखनऊ से प्रशिक्षण प्राप्त किया। इस प्रशिक्षण कार्यक्रम में कृषकों को कम्पोस्ट बनाना, बीजाई करना, कीट एवं रोग का प्रबंधन, मशरूम की धुलाई, कटाई, पैकिंग आदि की प्रायोगिक जानकारी भी दी गई। प्रायोगिक तौर पर इन्होंने केवल एक क्विंटल सूखे भूसे से कम्पोस्ट बनाया और उससे बटन मशरूम का उत्पादन 0.4 हैक्टर भूमि में शुरू किया। इसके बाद वर्ष 2017-18 में 40 क्विंटल भूसे से कम्पोस्ट बनाने का निर्णय लिया। इन्होंने 2000 वर्ग फीट क्षेत्रफल में बांस तथा पराली से झोंपड़ी बनाई, जिसमें 60 फीट लंबे और 4 फीट चौड़े आकार के बारह रैक बनाए। इस पर तैयार 80 क्विंटल कम्पोस्ट से 15-18 क्विंटल मशरूम का उत्पादन किया। इसके लिए अक्टूबर में कम्पोस्टिंग का काम शुरू किया। एक माह में कम्पोस्ट तैयार होने के बाद बीजाई की, जिससे नवंबर के द्वितीय सप्ताह के बाद मशरूम का उत्पादन शुरू हो गया और यह फरवरी तक चलता रहा। इसमें कुल लागत 95,300 रुपये आई और कुल लाभ 1,51,800 रुपये प्राप्त हुआ। इसके आय-व्यय का अनुपात 1.57:1 था और शुद्ध लाभ 54,700 रुपये का हुआ।

इस सफल प्रयास के बाद श्री मुकेश ने वर्ष 2018-19 में पुन: सितंबर के प्रथम सप्ताह में 60 क्विंटल भूसे से कम्पोस्ट बनाना शुरू किया। इससे 28 दिनों में लगभग 120 क्विंटल कम्पोस्ट तैयार हुआ। इसमें बीजाई के 15 दिनों के बाद बटन मशरूम उत्पादन कर इससे 25 क्विंटल मशरूम का उत्पादन प्राप्त किया। इस वर्ष लागत 85,500 रुपये थी, जबकि कुल लाभ 2,50,000 रुपये था और शुद्ध लाभ 1,64,500 रुपये का था। मशरूम उत्पादन गत वर्ष के क्षेत्रफल में ही किया। इसके लिए इन्होंने 65 फीट लंबी और 4 फीट चौड़ाई की 16 रैक बनाई।

गुणकारी है बटन मशरूम

बटन मशरूम से बढ़ाएं आमदनी

*कृषि विज्ञान केंद्र, भाकृअनुप-भारतीय गन्ना अनुसंधान संस्थान, लखनऊ (उत्तर प्रदेश)

पनपते बटन मशरूम

मशरूम के साथ अन्य सब्जियों का उत्पादन

तैयार ताजा मशरूम

सारणी: बटन मशरूम उत्पादन का आर्थिक विवरण

वर्ष 2017-18				
कुल लागत (रुपये)	औसत उत्पादन (क्विंटल)	कुल लाभ (रुपये)	शुद्ध लाभ (रुपये)	लागत: लाभ
95,300	15-18	1,51,800	56,500	1:1.59
भूसा-20,400 रुपये (40 क्विंटल/510 रुपये प्रति क्विंटल), अन्य सामग्री-51,900 रुपये एवं मजदूरी-23,000 रुपये				
वर्ष 2018-19				
कुल लागत (रुपये)	औसत उत्पादन (क्विंटल)	कुल लाभ (रुपये)	शुद्ध लाभ (रुपये)	लागत:लाभ
85,500	25	2,50,000	1,64,500	1:2.92
भूसा-30,000 रुपये (60 क्विंटल/500 रुपये प्रति क्विंटल), अन्य सामग्री-35,500 रुपये एवं मजदूरी-20,000 रुपये				

मशरूम के साथ

कृषि विज्ञान केंद्र के तकनीकी सहयोग से प्रक्षेत्र के कुल क्षेत्रफल (2500 वर्ग मीटर) के तीन चौथाई हिस्से पर श्री मुकेश कुमार रबी मौसम में विभिन्न प्रकार की विदेशी सब्जियां जैसे-ब्रोकली, चाइनीज कैबेज, पार्सले, लेट्यूज, सेलेरी, लीक उगाते हैं। इसमें 15,000 रुपये के खर्च में 60,000 रुपये की आमदनी प्राप्त होती है। इसके साथ ही इस प्रक्षेत्र पर खरीफ मौसम में स्वीट कॉर्न, बेबी कॉर्न, खरबूजा एवं तरबूज की खेती करते हैं, जिससे लगभग 15,000 रुपये की आमदनी प्राप्त होती है।

श्री मुकेश मशरूम की इस खेती से बहुत खुश हैं तथा अपने अन्य साथियों को भी इसके लिए प्रेरित करते रहते हैं। मशरूम उत्पादन के लिए तकनीकी सहयोग समय-समय पर कृषि विज्ञान केंद्र द्वारा दिया जाता है, जिसके कारण इनके मशरूम की बाजार में एक अलग पहचान है। आने वाले वर्ष में इन्होंने बटन मशरूम के अतिरिक्त ढींगरी तथा मिल्की मशरूम की खेती भी करने का मन बनाया है। इससे लगभग 10 माह तक मशरूम की खेती पर निर्भर रह सकते हैं।

पोषण से भरपूर मशरूम

श्री मुकेश कुमार, मशरूम की खेती से काफी लाभान्वित हुए हैं। निश्चित ही उनका प्रयास सराहनीय है। वर्तमान समय में श्री मुकेश कुमार एक नवोन्मेषी युवा कृषक के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनकी मशरूम की खेती देखने के लिए लखनऊ के अतिरिक्त अन्य जनपदों से भी लोग आते हैं। इनके इस कार्य के लिए इन्हें विभिन्न संस्थानों द्वारा सम्मानित भी किया जा चुका है।

सोया व्यंजन

सोयाबीन हाई प्रोटीन फूड है, जिसे विभिन्न प्रकार के व्यंजनों के रूप में प्रयोग किया जाता है। इससे कई तरह के फूड आइटम्स भी बनाये जाते हैं जैसे-सोया मिल्क, टोफू, सोया पेस्ट आदि। सोयाबीज, कोलेस्ट्रॉल को कम करता है। इसलिए यह दिल को दुरूस्त रखता है और हार्ट अटैक एवं स्ट्रोक के खतरे को कम करता है। इसमें मौजूद फाइबर और प्रोटीन मोटापा कम करने में भी मदद करते हैं। यह ब्लड प्रेशर और डायबिटीज को भी नियंत्रित करने में सहायता करता है। सोया में आइसोफ्लेवोन्स (एंटीऑक्सीडेंट) की मात्रा काफी ज्यादा होती है, जो कैंसर के खतरे को कम करने में भी मददगार है। इसमें काफी मात्रा में विटामिन और खनिज भी पाए जाते हैं।

जापान और इंडोनेशिया के फर्मेन्टेड (किण्वित) सोया खाद्य पदार्थ जैसे-टेम्फ (टोफू का विकल्प), मीसो (किण्वित सोयाबीन का पेस्ट, जौ और कोजी), मिरिन (राइस, वाइन के साथ कुकिंग) और एमेजेक (किण्वित चावल से तैयार पेय) बेहद लोकप्रिय हो रहे हैं। भारत में भी स्वास्थ्य के प्रति जागरूक लोग इन्हें विभिन्न व्यंजनों में शामिल करने लगे हैं। इनमें खास स्वाद और महक होती है। ये प्रोटीन से भरपूर होने के साथ ही एंटीऑक्सीडेंट और प्रोबायोटिक होने के कारण पाचन प्रक्रिया में भी सहायक हैं। ये शरीर की प्रतिरक्षा प्रणाली में भी सुधार करते हैं।

टेम्फ

इंडोनेशिया का यह किण्वित केक एंटीऑक्सीडेंट से समृद्ध होने के साथ ही शाकाहारियों के लिए प्रोटीन का उत्तम स्रोत भी है। इसका गठन ठोस एवं सूखा होता है और इसका अखरोट जैसा स्वाद होता है। इसे तरीदार सब्जी में मिलाया जा सकता है। यह एक उत्तम प्रोबायोटिक है। एक बार इसका सीलंबद पैकेट खोलने के बाद इसे अच्छी तरह से वापिस लपेटकर तुरंत फ्रिज में रखें। इसके आसपास कुछ खुली जगह अवश्य रखें, अन्यथा गर्मी के कारण इसमें फिर से किण्वन शुरू हो जाता है।

टेम्फ

एमेजेक

यह मीठी, बिना एल्कोहल के राइस वाइन है। यह सूखे राइस कोजी (स्टार्टर

एमेजेक

मोल्ड जो चावल पर विकसित होता है) को पानी में मिलाकर बनायी जाती है। यह विशेष वातावरण परिस्थितियों में किण्वित की जाती है। यह ब्राउन राइस से बनायी जाती है और पोषक तत्वों से भरपूर है। इसमें सक्रिय एंजाइम होते हैं, जो कार्ब, वसा और प्रोटीन का पाचन करने में सहायक होते हैं। इससे पाचन शक्ति दुरूस्त होने के साथ चयापचय क्रिया में सुधार होता है, त्वचा खिल जाती है और प्रतिरक्षा प्रणाली भी मजबूत होती है।

इस पेय को हल्का गर्म करके, ताजा अदरक डालकर सर्दी के दिनों में पिया जाता है। गर्मी के दिनों में इसे ठंडा पिएं। बेकिंग में इसे दूध की जगह इस्तेमाल किया जाता है। इसे कम मात्रा में पिएं, क्योंकि इसमें शर्करा की मात्रा ज्यादा होती है।

मीसो सूप

सामग्री: 2 हरे प्याज कटे हुए, 6 टोफू क्यूब, डेढ़ छोटा चम्मच मीसो पेस्ट, 2 कप पानी।

मीसो सूप

विधि: टोफू को पानी में नरम होने तक उबालें। इसमें हरे प्याज मिलायें। आंच को धीमा करें और इसमें धीरे-धीरे मीसो पेस्ट मिलायें। अच्छी तरह से इसे हिलायें और आंच बंद कर दें। गरमा-गरम सर्व करें।

नोट: मीसो को जल्दी न मिलायें। इसे पकाने की जरूरत नहीं होती। सिर्फ कुछ सेकेंड के लिए इसे धीमी आंच पर रखें। यदि इसे उबाल दिया जाये तो इसके प्रोबायोटिक गुण नष्ट हो जाते हैं। मीसो पेस्ट को कभी एक साथ न मिलायें। इसे धीरे-धीरे मिलायें ताकि गुठली न बने। इसे हमेशा ताजा बनाकर पीयें। यदि इसे रख दिया जाये तो मीसो तली पर बैठ जाता है और इसे मिलाने के लिए दोबारा गर्म करना पड़ता है।

मिरिन

मिरिन राइस वाइन से मिलता-जुलता है, लेकिन यह मीठा ज्यादा होता है। सब्जियों और मछली को मिरिन लगाकर स्टीम करें या और ग्रिल या बारबेक्यू पर पका लें। सोया सॉस, अदरक और तिलों के साथ इसे

मिरिन

मिलाया जाता है। मिरिन में वसा बिल्कुल भी नहीं होती, लेकिन इसमें शर्करा अंश अधिक होने के कारण मधुमेह के रोगियों के लिए यह उपयुक्त नहीं है। मिरिन को अपने आहार में आसानी से शामिल किया जा सकता है।

मीसो

यह फर्मेन्टेड सोया पेस्ट है। इसका नमकीन स्वाद होता है। इसे कच्चा या पकाकर खा सकते हैं। हालांकि उबालने से इसके लाभकारी प्रोबायोटिक गुणों में वृद्धि होती है।

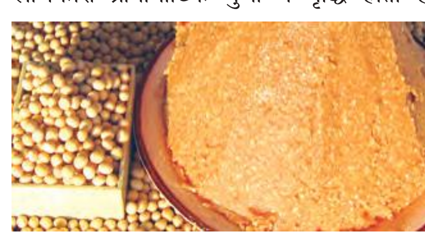

मीसो

इसमें सोडियम की मात्रा अधिक होने के कारण इसका प्रयोग सीमित मात्रा में करना चाहिए। मीसो को सॉस या व्यंजन में मिलाया जाता है और सलाद में इसका प्रयोग किया जाता है। इसे अधिक तापमान पर गर्म नहीं करना चाहिए। ■

प्रस्तुति: **सुनीता अरोड़ा**

मई-जून में बागों के कार्यकलाप

राम रोशन शर्मा*, हरे कृष्णा, स्वाति शर्मा**** और **विजय राकेश रेड्डी*****

वसंत की समाप्ति पर बढ़ते तापमान के साथ ग्रीष्म ऋतु का आगमन होता है। इसका बागों में की जाने वाली कृषि क्रियाओं पर भी प्रभाव पड़ता है। इन दिनों सदाबहार फल वृक्षों जैसे-आम, अमरूद, लीची, नीबूवर्गीय फल एवं पपीता आदि फलों के नए बाग स्थापित करने की तैयारी करनी होती है। इसके साथ ही आम की अगेती किस्मों के पके हुए फलों को तोड़कर बाजार भेजने की उचित व्यवस्था भी जरूरी है। इस दौरान शीतोष्णवर्गीय फलों जैसे-सेब, नाशपाती, आड़ू, आलूबुखारा आदि में फल लगने एवं फल बढ़ोतरी की क्रियाएं भी शुरू हो जाती हैं। इसी प्रकार, शुष्कवर्गीय फल बेर में काट-छांट, खजूर में फलों का विरलीकरण और अनार में बहार नियंत्रित करने की प्रक्रिया आवश्यक है। इसी संदर्भ में अधिक जानकारी लेख में प्रस्तुत की जा रही है।

आम

मानसून के आगमन से पूर्व, नए बाग लगाने के लिए मई में उचित दूरी पर बाग का रेखांकन (निशान लगाने) करने के बाद गड्ढे खोद लेने का कार्य पूरा कर लेना चाहिए। नर्सरी में बीजू पौधों की आवश्यकतानुसार सिंचाई करनी चाहिए एवं खरपतवार निकाल देने चाहिए। पकते हुए फलों का चिड़िया आदि पक्षियों से बचाव करना जरूरी है। फलों की आंतरिक सड़न रोकने के लिए बोरेक्स (4 कि.ग्रा./100 लीटर) का छिड़काव करना चाहिए।

जून में नीचे गिरे फलों को इकट्ठा कर लेना चाहिए तथा इन्हें स्थानीय बाजारों में भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। वृक्षों के नीचे की जमीन साफ-सुथरी रखनी चाहिए और यदि अगेती किस्म के फल पक गए हों तो उन्हें तोड़कर बाजार भेजने की उचित व्यवस्था करें।

अमरूद

ये महीने फल के विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं। गर्मियों में आमतौर पर वातावरण निरंतर शुष्क होता जाता है, जिससे मृदा में पानी की कमी होने लगती है। उचित समय पर सिंचाई नहीं होने पर फलों की वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ सकता है, जिसके परिणामतः वे छोटे रह सकते हैं। इसलिए 8-10 दिनों के अंतराल पर सिंचाई कर दी जानी चाहिए। मई में यदि बगीचों में फल मक्खी अथवा अन्य कीटों का प्रकोप हो तो क्विनाल्फॉस 25 ईसी का 2 मि.ली.

*खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग, भाकृअनुप-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012; **भाकृअनुप-भारतीय सब्जी अनुसंधान संस्थान, वाराणसी-221005 (उत्तर प्रदेश); ***भाकृअनुप-केंद्रीय शुष्क बागवानी अनुसंधान संस्थान, बीछवाल, बीकानेर-334006 (राजस्थान)

अमरूद की सघन बागवानी

प्रति लीटर या मेलाथियान 50 ईसी का 1 मि.ली. प्रति लीटर या मोनोक्रोटोफॉस 36 डब्ल्यूएससी 2 मि.ली. प्रति लीटर की दर से या 3 प्रतिशत नीम तेल का छिड़काव करें। छिड़काव प्रातःकाल या देर शाम में 21 दिनों के अंतराल पर कम से कम चार बार किया जाना चाहिए।

जून में नए अमरूद के बागों की स्थापना के लिए खेत को भलीभांति तैयार करें। पौधे लगाने के लिए गड्ढों को 3×3 मीटर दूरी पर खोदा जाना चाहिए। प्रत्येक गड्ढे को 10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 1 कि.ग्रा. नीम की खली, 50 ग्राम क्लोरपाइरीफॉस की धूल एवं ऊपरी मृदा के साथ मिलाकर भरा जाना चाहिए। पौधों में जिंक की कमी हो जाने पर पत्तियां छोटी एवं पीली लगती हैं। इसके नियंत्रण के लिए आधा कि.ग्रा. जिंक सल्फेट और आधा कि.ग्रा. बुझे हुए चूने का घोल 100 लीटर पानी में बनाकर इसका छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर 2-3 बार करना चाहिए।

बेर

देश के उत्तरी और पश्चिमी भागों में कटाई-छंटाई के काम के लिए मई-जून (वैशाख-ज्येष्ठ) का महीना, जब पौधों की अधिकांश पत्तियां झड़ चुकी होती हैं तथा पेड़ सुषुप्तावस्था में हों, सबसे उपयुक्त माना जाता है। छोटे पौधों में 60-90 सें.मी. तक की ऊंचाई तक तने पर निकलने वाली शाखाओं को काट देना चाहिए और किसी लकड़ी अथवा बांस के सहारे सीधा करना चाहिए। बड़े वृक्षों की चटकी, टूटी और जमीन को छूती शाखाओं को छांट देना चाहिए। एक-दूसरे से मिली हुई शाखाओं को भी काट देना चाहिए। छंटाई का कार्य जहां तक संभव हो सके, मई में पूरा कर लेना चाहिए। कटाई-छंटाई करते समय, सामान्यतः पिछले वर्ष की शाखाओं का 50 प्रतिशत भाग काट देते हैं। तृतीय शाखाओं को पूर्ण रूप से एंव द्वितीय शाखाओं की 15-20 कलियां काट देने पर मजबूत एंव ओजस्वी शाखाएं निकलती हैं। रोगों के प्रकोप से बचाव के लिए शाखाओं के कटे हुए स्थानों पर फफूंदनाशी (नीला थोथा या ब्लाइटॉक्स-50) का लेप कर देना चाहिए। काट-छांट के लिए तेज धार वाले औजार का प्रयोग करना चाहिए, ताकि शाखा क्षतिग्रस्त न हो। जून अत्यधिक गर्म रहता है। वृक्षों में जब तक फुटाव न हो, तब तक सिंचाई नहीं करनी चाहिए। जिन वृक्षों में छंटाई का कार्य रह गया हो, उनमें जून के प्रथम सप्ताह तक यह कार्य पूरा कर लेना चाहिए।

बेर में काट-छांट

छंटाई के पश्चात कटी हुई लकड़ियों और शाखाओं को हटाकर साफ करना चाहिए। गर्मी में एक-दो बार वृक्षों के नीचे जुताई कर देने पर हानिकारक कीट-मकोड़ों के अंडे तथा प्यूपा नष्ट हो जाते हैं। पौधों के मुख्य तनों के चारों ओर 60 सें.मी. तक की दूरी का घेरा छोड़कर पेड़ का बाहरी घेरा बनाया जा सकता है तथा इसको पानी में नाली से जोड़ देना चाहिए।

बेर में एक साल के पौधे के लिए

केला

मई में भी एक सप्ताह के अंतराल पर सिंचाई अवश्य करनी चाहिए। अवांछित पत्तियों को निकाल देना चाहिए। फलों के गुच्छों को धूप से बचाने के लिए पत्तियों से ढक देना चाहिए। नए बाग लगाने के लिए रेखांकन के पश्चात गड्ढे खोद लेने चाहिए।

नवस्थापित केले का बाग

जून के अंतिम सप्ताह में खोदे गए गड्ढों को गोबर की खाद, उर्वरक व मिट्टी बराबर मात्रा में मिलाकर ऊपर तक भरें। गड्ढों में मिट्टी भरने के तुरंत बाद पानी अवश्य देना चाहिए, ताकि मिट्टी बैठ जाए। पुराने बागों में जिन पत्तियों पर धब्बे वाला रोग दिखे उन्हें काटकर मिट्टी में गहरा दबा दें या जला दें तथा कवकनाशी ब्लीटॉक्स-50 का 0.3 प्रतिशत (300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) घोलकर छिड़काव करें। उकठा रोग की रोकथाम के लिए कंदों को एग्नॉल से उपचारित करें।

यह समय केले की रोपाई के लिए उपयुक्त होता है। रोपण हेतु तीन माह पुरानी, तलवारनुमा, स्वस्थ व रोगमुक्त पत्ती वाले कंदों का ही प्रयोग करें। पत्तियों को ऊपरी तने के कन्द से 25-30 सें.मी. पर काट दें। रोपाई से पूर्व सभी पत्तियों को (एक ग्राम बाविस्टीन प्रति लीटर पानी के घोल में) उपचारित कर लें। रोपाई के समय केवल कन्द भाग को ही मिट्टी में दबाएं तथा रोपाई के बाद सिंचाई कर दें।

5 कि.ग्रा. गोबर/कम्पोस्ट खाद, 50 ग्राम नाइट्रोजन, 50 ग्राम फॉस्फेट व 25 ग्राम पोटाश तथा यही मात्रा क्रमशः बढ़ाकर 8 या उससे अधिक आयु के पौधे के लिए 40 कि.ग्रा. गोबर की खाद, 400 ग्राम नाइट्रोजन, 400 ग्राम फॉस्फेट व 200 ग्राम पोटाश प्रति वृक्ष की दर से प्रयोग करें।

चीकू

मई में जब कड़ी धूप हो तो बगीचे की गहरी जुताई करें। लगभग 15 दिनों तक बगीचे की खाली जगह में धूप आने दें। ऐसा करने से कीटों के अंडे नष्ट हो जाएंगे तथा बाग में ज्यादा कीटनाशियों के छिड़काव से बचा जा सकेगा। इस समय बाग में सिंचाई बिलकुल न करें। नए बाग लगाते समय मानकीकृत किस्में लगाएं। बाग में मैग्नीशियम, सल्फर, बोरॉन, आयरन, जिंक की पूर्ति के लिए क्रमशः 1 प्रतिशत मैग्नीशियम नाइट्रेट, 1 प्रतिशत कैल्शियम सल्फेट, बोरॉक्स (5 कि.ग्रा. प्रति हैक्टर), आयरन सल्फेट (0.5 प्रतिशत), जिंक सल्फेट (0.5 प्रतिशत) डालें। बाग में नाइट्रोजन, पोटेशियम और फॉस्फोरस के साथ-साथ सूक्ष्म पोषक तत्वों की मृदा में कमी के प्रति सजग रहें। किसी भी खाद को डालने से पहले मृदा की जांच निकटतम संस्था से अवश्य करवाएं और जरूरत के अनुसार ही उर्वरक प्रयोग करें।

अनार

उत्तर-पश्चिमी भारत के शुष्क क्षेत्रों में, जहां सिंचाई के सीमित संसाधन उपलब्ध हैं, उन क्षेत्रों में अनार मृग बहार किस्म पसंद की जाती है। जबकि महाराष्ट्र के सिंचित क्षेत्रों में अम्बे बहार को पसंद किया जाता है। मृग बहार वाले क्षेत्रों में अप्रैल-मई से ही खेतों में सिंचाई रोक दी जाती है। सिंचाई रोकने के 45 दिनों के बाद पौधों की हल्की छंटाई करनी चाहिए। छंटाई के तुरंत पश्चात, उर्वरकों की संस्तुत खुराक और सिंचाई शुरू कर देनी चाहिए। सामान्यतः अनार के पौधों में 10-15 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 250 ग्राम नाइट्रोजन, 125 ग्राम फॉस्फोरस एवं 125 ग्राम पोटेशियम प्रति वर्ष प्रति वृक्ष देना चाहिए। खाद एवं उर्वरकों का उपयोग पौधों के छत्रक के नीचे चारों ओर 8-10 सें.मी. गहरी खाई बनाकर देना चाहिए। यह पुष्पन और फलन की अभिवृद्धि करता है। वैकल्पिक रूप से सिंचाई रोकने के 45 दिनों बाद, पत्तियों को गिराने के लिए, एथ्रेल 1000 पीपीएम, प्रोफेनोफॉस 2 मि.ली. प्रति लीटर, मेटासिड 2 मि.ली. प्रति लीटर, थायोयूरिया 3 ग्राम प्रति लीटर या यूरिया फॉस्फेट 5 ग्राम प्रति लीटर का छिड़काव करें। तेलिया रोग से संक्रमित क्षेत्रों में मृग बहार नहीं ली जानी चाहिए अन्यथा मई के तीसरे सप्ताह से जून के आखिरी सप्ताह एवं इसके बाद भी रासायनिक जैवनाशियों का प्रति सप्ताह प्रयोग करें।

अनार

मानसून के दौरान अनार के नए बाग लगाने हेतु, रेखांकन एवं गड्ढे खोदने का कार्य भी मई-जून में ही पूर्ण कर लेना चाहिए। सामान्यतः 4-5 मीटर की दूरी पर अनार का रोपण किया जाता है। पौध रोपण के एक माह पूर्व 60 × 60 × 60 सें.मी. आकार के गड्ढे खोदकर 15 दिनों के लिए खुला छोड़ दें। इसके बाद गड्ढे की ऊपरी मृदा में 10-15 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 1 कि.ग्रा. सिंगल सुपर फॉस्फेट, 50 ग्राम क्लोरोपायरीफॉस चूर्ण मिलाकर गड्ढों को सतह से 15 सें.मी. ऊंचाई तक भर दें। गड्ढे भरने के बाद सिंचाई करें ताकि मृदा भली-भांति बैठ जाए।

आलूबुखारा

ग्रीष्म ऋतु आते ही आलूबुखारे में खरपतवारों का प्रकोप बढ़ जाता है अतः समय-समय पर इन्हें निकाल देना चाहिए। अलूचे के वृक्षों के समुचित विकास के लिए मई-जून में एक सप्ताह के अंतराल पर नियमित रूप से सिंचाई करनी चाहिए। जिन जगहों पर सिंचाई की उचित व्यवस्था न हो वहां वृक्षों के नीचे पलवार (मल्च) बिछा देनी चाहिए। इसके अन्य लाभ भी हैं, जैसे इसके प्रयोग से खरपतवार का उगना कम हो जाता

रसीले आलूबुखारे

अंगूर

नई बेलों में सिंचाई 10-15 दिनों के अंतराल पर करते रहना चाहिए। मई के अंत तक परलेट और ब्यूटी सीडलैस किस्मों के तैयार गुच्छों को तोड़कर बाजार भेजने की व्यवस्था करनी चाहिए। किस्में पकनी आरंभ हो गई हों तो उनमें सिंचाई बंद कर देनी चाहिए, अन्यथा फलों में ठोस घुलनशील पदार्थों की अत्यधिक कमी आती है एवं फल फटने लगते हैं। ऐसे फलों को बाजार में बेचना कठिन होता है। यदि एंथ्राक्नोज (श्याम व्रण) का प्रकोप हो तो बाविस्टिन (0.2 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव एक सप्ताह के अंतराल पर दो बार करना चाहिए। चूर्णिल फफूंद की रोकथाम के लिए केराथेन (0.1 प्रतिशत) के घोल का छिड़काव अथवा सल्फर की धूल का प्रयोग करना चाहिए। इन महीनों में थ्रिप्स का भी प्रकोप कहीं-कहीं रहता है। इसकी रोकथाम के लिए मैलाथियान के 500 मि.ली. प्रति 500 लीटर पानी में घोल का छिड़काव करना चाहिए।

मन ललचाते अंगूर

है। यह मृदा के तापमान को भी ठीक रखता है। इसके साथ ही अच्छी गुणवत्ता के फल भी प्राप्त होते हैं।

गर्मी के दिनों में वृक्षों को तेज धूप के हानिकारक प्रभाव से बचाने के लिए मुख्य तने पर नीले थोथे के घोल का लेप कर देना चाहिए। अलूचे की किस्मों ब्यूटी, सांता रोजा और मैथिली में अधिक फल लगते हैं एवं वृक्षों की शाखाएं फलों का भार न सह सकने के कारण टूट भी जाती हैं। इसके लिए बांस या मजबूत लकड़ी का सहारा देना चाहिए।

जापानी अलूचा की लगभग सारी किस्मों में बहुत फल लगते हैं। यदि सभी फलों को वृक्षों पर छोड़ दिया जाए तो फल छोटे आकार के होते हैं। फलों की छंटाई कर देनी चाहिए। फलों की छंटाई हाथ से अथवा नेफ्थलीन एसिटिक एसिड अम्ल 50 पी.पी.एम. (50 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव करने से पौधों की वृद्धि के लिए नाइट्रोजन की सबसे अधिक आवश्यकता होती है। अतः 0.5 प्रतिशत यूरिया के घोल का पर्णीय छिड़काव फूलों की पंखुड़ियों के झड़ने से लेकर फलों के पकने के 2 सप्ताह पहले तक किया जा सकता है। जिंक और लौह तत्व की कमी की पूर्ति के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट और फेरस सल्फेट के घोल का पर्णीय छिड़काव किया जा सकता है। चिड़ियों से फलों की रक्षा करनी चाहिए तथा यदि पत्ती खाने वाले कीट का प्रकोप हो तो सेविन (कार्बारिल) के 0.05 प्रतिशत घोल का छिड़काव करें।

सेब

तनों की छाल को गर्मी से बचाने के लिए घास से बांध देना चाहिए। इस मौसम में अपस्थानिक शाखाएं (सकर) भी बहुत निकलती हैं। ये पौधों से अधिकाधिक पोषक तत्व लेती हैं। इनको जल्द से जल्द हटा देना चाहिए। इस मौसम में फलों का गिरना भी प्रमुख समस्या है। इसे रोकने के लिए नेफ्थलीन एसिटिक अम्ल का छिड़काव फलों के लगने के चार से पांच सप्ताह बाद करना चाहिए।

चूर्णिल फफूंद का प्रकोप होने पर केराथेन 0.03 प्रतिशत (300 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) या चूना और गंधक का 1 : 40 के अनुपात में मिलाकर छिड़काव करें। गंधक-चूने के उपयोग से रोगों और कीटों दोनों को नियंत्रित कर सकते हैं। यदि पौधों में जिंक की कमी हो तो 0.1 प्रतिशत (1 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) जिंक सल्फेट के घोल का छिड़काव करना चाहिए। बोरॉन की कमी होने पर 0.5 प्रतिशत सुहागा (5 कि.ग्रा. प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव करें।

सेब

पपीता

फलों से लदे पपीते के पेड़

मई में बाग का रेखांकन करने के बाद गड्ढे भरने का कार्य समाप्त कर लेना चाहिए। पछेती किस्मों के तैयार फलों को बाजार भेजने की उचित व्यवस्था करनी चाहिए। नर्सरी में लगे छोटे-छोटे पौधों को गर्मी से सुरक्षा की समुचित व्यवस्था करनी चाहिए। नर्सरी पर छप्पर डाल दिया जाए तो अच्छा रहता है। नर्सरी के पौधों की साप्ताहिक अंतर पर सिंचाई की नियमित व्यवस्था आवश्यक है। बाग में लगे पौधे को तीन तरफ से घास या पुआल से ढक दिया जाए तो अच्छा रहता है। जून में नर्सरी पौधों को निकालकर बाग में रोप देना चाहिए एवं उसके बाद सिंचाई करनी अति आवश्यक है। पुराने बागों की बजाय नये बागों में पानी की अधिक आवश्यकता होती है।

नीबूवर्गीय फल

नए बाग लगाने हेतु मई में बाग का रेखांकन करके गड्ढे खोद लेने चाहिए। पौधशाला के पौधों की नियमित सिंचाई, निराई-गुड़ाई करते रहना चाहिए। बाग में 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करनी चाहिए। मौसम में अधिक तापमान व बढ़ती गर्मी के कारण फलों की बढ़वार रुक सकती है एवं फलों का गिरना एक प्रमुख समस्या है। अतः 2, 4 डी (10 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव करना काफी लाभदायक रहता है।

जून के अंत में खोदे गए गड्ढों को गोबर की खाद, उर्वरक और मिट्टी की बराबर मात्रा मिलाकर भर देना चाहिए तथा भरने के बाद सिंचाई अवश्य करनी चाहिए, ताकि मिट्टी बैठ जाए। जल निकास नालियों को साफ कर देना चाहिए। फलदार पौधों में नाइट्रोजन एवं पोटाश की दूसरी मात्रा को इसी माह देना लाभदायक रहता है।

फलों का फटना-एक गंभीर समस्या

नीबू में एक वर्ष के पौधे में 25 ग्राम नाइट्रोजन व 25 ग्राम पोटाश, जो क्रमशः बढ़कर 10 वर्ष या उससे अधिक आयु के पौधे के लिए 250 ग्राम नाइट्रोजन व 250 ग्राम पोटाश हो जाएगा, का प्रयोग इस माह या फल लगने के दो माह बाद करें। जस्ते की कमी दूर करने के लिए 0.5 प्रतिशत जिंक सल्फेट या आवश्यकतानुसार अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों का छिड़काव करें।

लीची

मई में पौधों की 15 दिनों के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए ताकि फलों में नियमित वृद्धि होती रहे। अन्य फलों की भांति लीची बाग का रेखांकन भी मई में ही कर लेना चाहिए। रेखांकन उपरांत 3 × 3 फीट आकार के गड्ढे खोद लें व उन्हें एक महीने बाद गोबर की खाद, रासायनिक खाद व मिट्टी की बराबर मात्रा से भर लेना चाहिए। कुछ किस्मों के फल मई में पकना शुरू हो जाते हैं, उन्हें बर्रों से बचाना चाहिए।

लीची के फलों का फटना

तैयार फलों को सुबह या शाम को तोड़कर भेजने की समुचित व्यवस्था आवश्यक है। फलों के पकने के समय उनके फटने की समस्या लीची में अत्यधिक है। पौधे में नियमित सिंचाई करते रहना चाहिए अन्यथा मई व जून में अचानक वर्षा होने या सिंचाई करने से फलों के फटने की अत्यधिक समस्या आएगी। यदि फिर भी फल फटें तो पौधों पर समयानुसार जिब्रेलिक अम्ल (4 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) के घोल का छिड़काव काफी लाभदायक रहता है। जिंक सल्फेट के 1.5 प्रतिशत घोल का छिड़काव 15 दिनों के अंतराल पर फल की निंबोली अवस्था से फलों की तुड़ाई तक करने पर भी फलों के फटने (चटकने) की समस्या काफी कम हो जाती है। माइट के प्रकोप को कम करने हेतु डाइमिथोएट (100 ग्राम प्रति 100 लीटर पानी में) का छिड़काव लाभकारी रहता है। लीची में गूटी बांधने का कार्य जून के दूसरे पखवाड़े में करें। इसमें मिलीबग की रोकथाम के लिए थालों में 2 प्रतिशत कीटनाशी धूली डालकर गुड़ाई कर दें।

फालसा

फालसे के फलों की उचित बढ़वार हेतु 15 दिनों के अंतराल पर नियमित रूप से सिंचाई करते रहना चाहिए। फालसे में फलों का पकना अप्रैल के अंतिम सप्ताह में शुरू हो जाता है, जो जून के प्रथम सप्ताह तक जारी रहता है। इसके फल अत्यंत नाजुक होते हैं। अतः इनकी तुड़ाई सुबह या शाम में करनी चाहिए और तुरंत बाद फलों को बाजार में भेजने की समुचित व्यवस्था करें।

फलन की समाप्ति के बाद, पौधों की काट-छांट अवश्य करें और इसे जून के अंतिम सप्ताह तक समाप्त कर लेना चाहिए। उचित काट-छांट से फालसे के पौधे का आकार अच्छा रहता है व अगले वर्ष इसमें फसल अच्छी व नियमित रूप से आती है।

आंवला

पौध रोपण के लिए गड्ढे जून में खोदते हैं तथा गड्ढे की दूरी किस्म के अनुसार 8-10 मीटर रखते हैं। जून में 1×1×1 मीटर आकार के गड्ढे खोद लेने चाहिए, जिन्हें 15 दिनों के बाद 10 कि.ग्रा. गोबर की सड़ी खाद, 1 कि.ग्रा. नीम की खली, 50 ग्राम क्लोरपाइरीफॉस की धूल एवं ऊपरी मृदा के साथ मिलाकर भरा जाना चाहिए। आंवले में स्व-बंध्यता पाई जाती है अतः कम से कम दो किस्में अवश्य लगाते हैं, जो एक-दूसरे के लिए परागणकर्ता का कार्य करती हैं।

आंवला एक पर्णपाती वृक्ष है। अतः इसके पेड़, फल लगने के बाद, गर्मियों के मौसम में सुषुप्तावस्था में प्रवेश कर जाते हैं

आंवला के आरंभिक अवस्था के फल

और मानसून आने तक उसी अवस्था में रहते हैं। इसलिए पौधों को गर्मियों के दौरान, अन्य फसलों की तुलना में ज्यादा सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। इसकी 10-15 दिनों के अंतराल पर हल्की सिंचाई लाभकारी होती हैं। एकांतरित दिनों पर ड्रिप से सिंचाई फलों के विकास और आंवला की उपज की बढ़ोतरी के लिए उपयोगी पायी गयी है। इसके अतिरिक्त, इससे खरपतवार भी कम उगते हैं।

मई-जून की गर्मियों में मृदा में नमी संरक्षण के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध सामग्रियों जैसे-धान का भूसा, स्थानीय घास, केले के पत्ते या गन्ने के अवशेष पलवार के रूप में 20 कि.ग्रा. प्रति वृक्ष की दर से थालों मे बिछा सकते हैं। इस पलवार को 10-15 सें.मी. मोटाई तक एकसार वितरित किया जाना चाहिए। यदि पॉलीथीन पलवार उपयोग करनी हो तो, 100 माइक्रॉन मोटी फिल्म प्रयोग कर सकते हैं।

खजूर

नए बाग लगाने के लिए गड्ढे जून में खोदते हैं। गड्ढे की दूरी किस्म के अनुसार 6-8 मीटर रखते हैं। फल सेट होने के बाद मई में गुच्छों के मुख्य डंठल को नीचे की ओर मोड़ देते हैं, ताकि ये बिना पत्तियों के मध्य शिरा को छुए नीचे लटकती रहें। इससे बढ़ते फलों के वजन से डंठल के टूटने का खतरा कम होता है। इसके साथ ही पत्तियों के मध्य शिरा की रगड़ से फलों को होने वाला नुकसान भी कम होता है।

मई के अंतिम सप्ताह से जून के प्रथम सप्ताह तक फलों के विरलीकरण का कार्य भी पूरा कर लेना चाहिए। यह आमतौर पर या तो एक गुच्छे पर लगे फलों की संख्या को कम कर या कुछ गुच्छों को हटाने के द्वारा पूरा किया जाता है। पौधे की उम्र तथा किस्म के आधार पर, प्रति पौधा 5 से 10 गुच्छों या 1300 और 1600 फलों को बनाए रखा जाना चाहिए। इसके बाद प्रत्येक गुच्छे के केंद्र से एक-तिहाई फलों की लड़ियों को काटकर अलग कर देना चाहिए, जिससे फल जल्दी पकते हैं तथा उनकी गुणवत्ता में भी सुधार होता है।

फलों की छंटाई अथवा विरलीकरण की तीव्रता खद्रावी किस्म में 40-50 प्रतिशत, जैदी और बरही में 50-60 प्रतिशत तथा हलावी किस्म में 50-55 प्रतिशत तक होनी चाहिए। मई-जून के दौरान बागों में सिंचाई की नियमित रूप से व्यवस्था होनी चाहिए। जून के अंत से फल परिपक्व अवस्था में आने लगते हैं, अतः उन्हें जैव निम्नीकरणीय प्लास्टिक की चादरों से ढक देना चाहिए, ताकि संभावित वर्षा से होने वाले नुकसान से फलों को बचाया जा सके। पक्षियों से होने वाले नुकसान को रोकने के लिए, फलों को लोहे की जालियों से भी ढकते हैं। जून के तीसरे से चौथे सप्ताह में अगेती प्रजातियों जैसे-नागल, मस्कट, तायर, सायर, हलावी, खूनैजी में तुड़ाई प्रारंभ कर सकते हैं। इनमें अधिकांशतः फल परिपक्व अवस्था में पहुंच जाते हैं। इन फलों को ताजे फलों के रूप में या प्रसंस्करण के बाद छुहारा बनाने में प्रयोग में लाया जा सकता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद
के चुनिंदा हिन्दी प्रकाशन

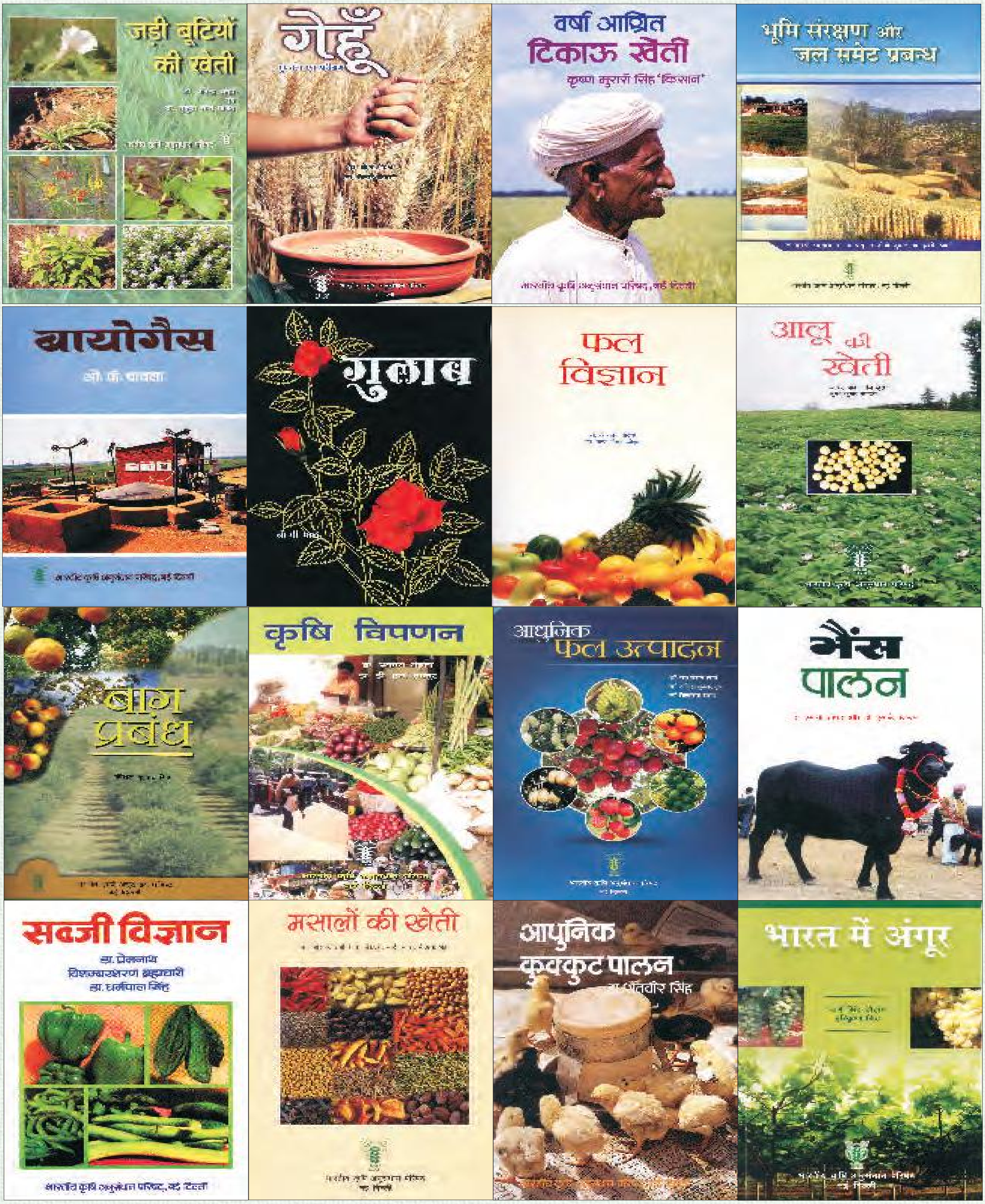

भाकृअनुप
ICAR

संपर्क सूत्रः व्यवसाय प्रबंधक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन, पूसा, नई दिल्ली –110 012

दूरभाषः 011–25843657, E-mail: bmicar.org.in

भारत में होगी हींग की खेती

देश में पहली बार हींग की व्यावसायिक खेती की तैयारी चल रही है। हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के पहाड़ों पर इसकी खेती के लिए वैज्ञानिक लंबे समय से प्रयास कर रहे हैं। देश के कृषि वैज्ञानिकों की पहल पर अब हिमाचल प्रदेश और उत्तराखंड के शीत मरुस्थलों में हींग की खेती की शुरूआत हो रही है। सीएसआईआर-हिमालय जैव संपदा प्रौद्योगिकी संस्थान, पालमपुर, हिमाचल प्रदेश ने ईरान से हींग के पौधे मंगवाकर उन्हें लाहौल एवं स्पीति के रिबलिंग स्थित अपने केन्द्र में प्रयोग के तौर पर उगाना शुरू कर दिया है।

हींग का सबसे ज्यादा उपयोग भारत में होता है। दुनिया में वर्षभर में पैदा की जाने वाली हींग का 40 फीसदी इस्तेमाल अकेले भारत में होता है। मसालों से लेकर दवाइयों में इसका उपयोग किया जाता है,

वानस्पतिक दूध है हींग

हींग एक बारहमासी शाक है, (ऊंचाई 1 से 1.5 मीटर तक)। इसका बोटैनिकल नाम अस्फाइटिडा फेरूला है। यह भूमिगत प्रकन्दों व ऊपरी जड़ों से रिसने वाला शुष्क वानस्पतिक दूध

है। हींग का पौधा, सौंफ की प्रजाति का एक ईरानी मूल का पौधा है। यह सौंफ के बड़े पौधे जैसा दिखता है। इसमें पीले रंग के फूल गुच्छे के रूप में टहनी के अंत में लगते हैं। इस पौधे की जड़ से हींग प्राप्त होती है। जड़ पर चीरा लगाने से रस निकलता है और सूखकर गोंद जैसा हो जाता है, यही हींग है। इसमें तेज गंध आती है और असहनीय होती है। एक पेड़ से लगभग 100 ग्राम से लेकर 300 ग्राम तक हींग प्राप्त हो सकती है।

लेकिन हैरानी की बात यह है कि हींग का उत्पादन भारत में नहीं होता है। हींग का पौधा अत्यधिक सर्द तापमान में उगता है। ऐसे इलाके जहां न्यूनतम तापमान शून्य से नीचे हो और अधिकतम तापमान 25° सेल्सियस से ज्यादा न हो, इसके लिए उपयुक्त हैं। इस लिहाज से देश के पहाड़ी राज्यों के कई इलाके हींग की खेती के लिए मुफीद हैं। इन राज्यों में किसान अब भी परंपरागत खेती कर रहे हैं। इन फसलों को जंगली जानवर और आवारा पशु भारी नुकसान पहुंचा रहे हैं। हींग को जंगली जानवर और आवारा पशु नुकसान नहीं पहुंचाएं तो इससे किसानों को उनकी मेहनत का पूरा मूल्य मिल सकेगा। दुनिया में इसकी खेती मुख्य रूप से अफगानिस्तान, ईरान, इराक, तुर्कमेनिस्तान और पाकिस्तान के ब्लूचिस्तान प्रांत में प्रमुख रूप से होती है।

हींग का पौधा

हींग के आयात पर प्रति वर्ष करोड़ों रुपये की विदेशी मुद्रा खर्च होती है। ऐसे में इस स्थिति से उबरने और भारत के किसानों को आय का नया विकल्प देने के लिए देश में हींग की खेती की शुरूआत एक अच्छी पहल है।

देश में इस समय और शुद्ध हींग का बाजार मूल्य लगभग 35 हजार रुपये प्रति किलोग्राम है। अगर भारत के किसान इसकी खेती करने लगेंगे तो उनका कायाकल्प हो सकता है। देश में हींग की मांग बहुत ज्यादा है और उत्पादन नगण्य है। देश में आयुर्वेद और अन्य भारतीय चिकित्सा पद्धति की औषधियां बनाने में हींग का काफी इस्तेमाल होता है।

गुणकारी है हींग

वाणिज्य एवं उद्योग मंत्रालय, भारत सरकार के अंतर्गत आने वाले भारतीय मसाला बोर्ड के अनुसार हींग दो किस्मों की होती है, एक हींग काबुली सफेद (दूधिया सफेद हींग) और दूसरी हींग लाल (लाल रंग)। इसका तीखा स्वाद है और इसमें सल्फर की मौजूदगी के कारण एक अरुचिकर तीक्ष्ण गंध निकलती है।

हींग का उपयोग मसाले के रूप में हर घर की रसोई में होता है। देश में इसकी सबसे बड़ी मंडी उत्तर प्रदेश के हाथरस में है। हींग को देश के भिन्न हिस्सों में अलग-अलग नाम से जाना जाता है। इसे तमिल में पेरुंगायम, तेलगु में इंगुवा, मराठी में हींग, मलयालम में कायम, गुजराती में हींगा, कश्मीर में यांग, संस्कृत में 'हींगु', हिन्दी में हींग, बांग्ला में हींग, कन्नड़ में हींगर, उड़िया में हेंगु, उर्दू में हींग के नाम से जाना जाता है।

एंटीऑक्सीडेंट है हींग

हींग का प्रयोग आयुर्वेदिक दवाओं में भी होता है। इसमें कई तरह के एंटीऑक्सीडेंट्स मौजूद होते हैं, जो संक्रमण और दर्द की समस्या को दूर करते हैं। हींग पाचन तंत्र को मजबूत करने का कार्य करती है। पेट में दर्द होने या पेट संबंधी अन्य रोगों में हींग को पानी में घोलकर पेट पर लेप देने भर से लाभ मिलता है। इसकी छोटी सी डली भी पानी के साथ खिला देने से रोगी को फायदा हो जाता है। इसके औषधीय गुण कई तरह की स्वास्थ्य समस्याओं से निजात पाने में मदद करते हैं। कच्ची हींग का स्वाद लहसुन जैसा होता है, लेकिन जब इसे व्यंजन में पकाया जाता है तो यह उसके स्वाद को बढ़ा देती है। ■

ISSN 0971-2984 पंजी. सं. (क्यू)–437

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की लोकप्रिय मासिक हिंदी पत्रिका

'खेती'

- निरंतर 73 वर्षों से प्रकाशित आपकी अपनी लोकप्रिय हिंदी मासिक पत्रिका **खेती** में खेती–बाड़ी के आधुनिक तौर–तरीकों, पशुपालन की उन्नत विधियों, कृषि वानिकी, औषधीय पौधों की खेती तथा प्रगतिशील किसानों के अनुभव पर आधारित सफलता गाथाओं से जुड़े अनुभवी कृषि वैज्ञानिकों के लेखों को अत्यंत सरल भाषा में प्रस्तुत किया जाता है। इस जानकारी का लाभ किसान भाई अपनी कृषि आय बढ़ाने के लिए उठा सकते हैं।

- संपूर्ण रंगीन पृष्ठों से सुसज्जित इस प्रतिष्ठित पत्रिका में **'अगले माह के कृषि कार्यकलाप'** तथा ***'कृषि खबरें, देश विदेश की'*** जैसे अत्यंत उपयोगी नियमित स्तंभ भी हैं जो रोचक होने के साथ नई जानकारियां भी प्रदान करते हैं। यही नहीं विभिन्न किसानोपयोगी विषयों पर पत्रिका के विशेषांकों का भी समय–समय पर प्रकाशन किया जाता है।

पत्रिका मूल्यः

एक प्रति : 30 रुपये

वार्षिक सदस्यता शुल्क : 300 रुपये

मंगाने के लिए संपर्क करें

व्यवसाय प्रबंधक

कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद

कृषि अनुसंधान भवन–1, पूसा गेट

नई दिल्ली–110012

दूरभाष : 011–25843657, ईमेल : bmicar@icar.org.in

डा. एस. के. सिंह, परियोजना निदेशक, कृषि ज्ञान प्रबंध निदेशालय द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली के लिए प्रकाशित तथा मैसर्स चन्दु प्रेस, 469, पटपड़गंज इंडस्ट्रियल एस्टेट, दिल्ली 110 092 से मुद्रित। सम्पादकः अशोक सिंह